RNI नं. : 7387/63
मुद्रण तिथि : 15-16 दिसंबर 2024
डाक प्रेषण तिथि : 15-17 दिसंबर 2024
ISSN : 2456-611X

वर्ष : 62 अंक : 17
मूल्य : ₹10/- पृष्ठ संख्या : 64
डाक पंजीयन संख्या : BIKANER/022/2024-26
Office Posted at R.M.S., Bikaner

राम चमकते भानु समाना

श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ का मुखपत्र

श्रमणोपासक

धार्मिक पाक्षिक

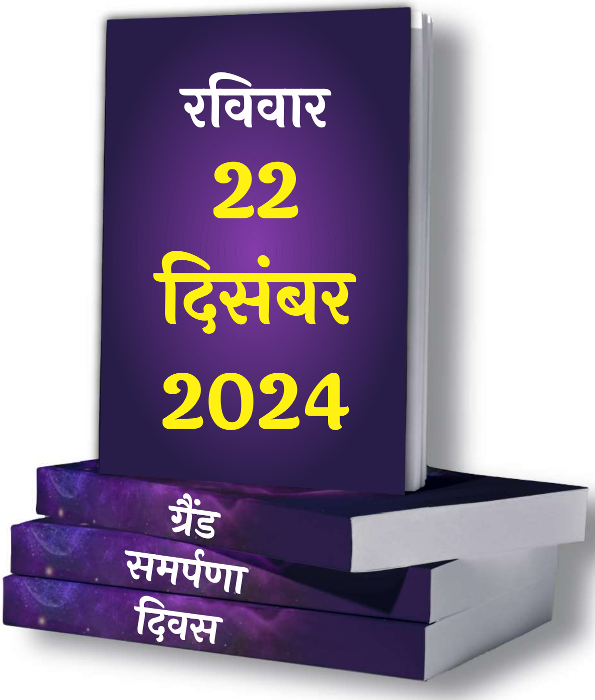

सुविचार

राम चमकते भानु समाना

बीज एक होता है,
पर फसल आने पर वह कई गुना
हो जाता है। वैसे ही जो दिया जाता है
उसका कई गुना लाभ
सुपात्रदान से प्राप्त होता है।

बोध वृद्धों जैसा,
ऋजुता बालक जैसी
और **जोश** जवानों जैसा हो।

अपने **कर्तृत्व का मूल्यांकन**
दूसरों पर छोड़ दो।

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

आगमवाणी

न वि मुण्डिएण समणो, न ओंकारेण बंभणो।
न मुणी रण्ण-वासेणं, कुस-चीरेण न तावसो।।
समयाए समणो होइ, बंभचेरेण बंभणो।
नाणेण य मुणी होइ, तवेण होइ तावसो।।

– उत्तराध्ययन (25/31, 32)

केवल सिर मुँडाने से कोई श्रमण नहीं होता। ओम् का जप करने से कोई ब्राह्मण नहीं होता। अरण्य में रहने से कोई मुनि नहीं होता। कुश-चीवर धारण करने से कोई तपस्वी नहीं होता। प्रत्युत वह समता से श्रमण होता है। ब्रह्मचर्य से ब्राह्मण होता है। ज्ञान से मुनि होता है और तप से तपस्वी होता है।

No-one becomes a monk by getting his head shorn of hair; No-one becomes a Brahmin by chanting Aum; no-one becomes a muni by dwelling in the jungle and no-one becomes an ascetic by wearing a grass-robe. Actually, one becomes a monk by acquiring equanimity of disposition, a Brahmin by observing celibacy, a muni by acquiring knowledge and an ascetic by observing austerities.

उत्तमखममद्दवज्जव-सच्चसउच्चं च संजमं चेव।
तवचागम किंचण्हं बम्ह इदि दसविहो धम्मो।।

– द्वादशानुप्रेक्षा (70)

उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम सत्य, उत्तम शौच, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य तथा उत्तम ब्रह्मचर्य, ये दस धर्म हैं।

The (Monastic) duties are ten– forgiveness, humility, simplicity, truthfulness, greedlessness, restraint, penance, renunciation, poverty and celibacy.

जा जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनियत्तई।
धम्मं च कुणमाणस्स, सफला जंति राइओ।।

– उत्तराध्ययन (14/25)

जो रात और दिन एक बार अतीत की ओर चले जाते हैं, वे फिर कभी वापिस नहीं लौटते। जो मनुष्य धर्म करता है, उसके वे रात-दिन सफल हो जाते हैं।

The time that slips into the past does not return. The time of the person who is (spiritually) dutiful is well-spent.

एगा अहम्मपडिमा, जं से आया परिकिलेसति।

– स्थानांग (1/1/38)

एक अधर्म ही ऐसी विकृति है, जिससे आत्मा क्लेश पाती है।।

The evil is such a flaw that it torments the soul.

दुविहे धम्मे-सुयधम्मे चेव चरित्तधम्मे चेव। – स्थानांग (2/1)

धर्म के दो रूप हैं - श्रुत धर्म यानी तत्त्व ज्ञान और चारित्र धर्म यानी नैतिक आचार।

The faith manifests itself in two forms the scriptural duty (gaining knowledge of the religious precepts) and moral duty or ethical conduct..

साभार- प्राकृत मुक्तावली

अनुक्रमणिका

धर्मदेशना

09 दानों में श्रेष्ठ अभयदान.................................. – आचार्य श्री नानालाल जी म.सा.
16 निज स्वरूप की साधना.................................. – आचार्य श्री रामलाल जी म.सा.

ज्ञान सार

20 आध्यात्मिक आरोग्यम्.................................. – संकलित
25 श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला........................ – कंचन कांकरिया
27 श्रीमद् उत्तराध्ययनसूत्र.................................. – सरिता बैंगानी

संस्कार सौरभ

30 धर्ममूर्ति आनंद कुमारी - भावी प्रवर्तिनी के दर्शन... – संकलित
32 गुरु गुण लिखा न जाए.. – सुरेश बोरदिया
34 महत्तम आरोग्यम् – डॉ. आभाकिरण गांधी
36 बँटवारा धन का हो, मन का नहीं – गौतम पारख
38 महत्तम शिखर का शिखर संकल्प – गणेशलाल डूंगरवाल
40 पतन से उत्थान की ओर – श्रमणोपासक
42 The Invisible Burden... – Urja Mehta

भक्ति रस

24 क्यों नया साल मनाएँ – संजय श्रीश्रीमाल
31 अचूक उपाय – कशिश सुराना
41 प्रभु महावीर के सिद्धांत – पायल वया
44 जगत उजियारा – धीरज मेहता
45 जैन गौरव बचाएँ – दीपक बोहरा

विविध

46 गुरुचरण विहार समाचार
–महेश नाहटा

अन्य से सुख-दुःख असंभव

– परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

जब तुम अपना सुख–दुःख दूसरे के हाथ सौंप देते हो तब तुम्हें दुःखी होना ही है। सुखी होने की कल्पना करना भी व्यर्थ है। दूसरे के हाथ सुख–दुःख सौंपने का तात्पर्य यह है कि अन्य के कारण दुःखी या सुखी होते रहना। जब किसी ने अनुकूल व्यवहार किया तो सुख का वेदन करना, उसके विपरीत किसी ने प्रतिकूल व्यवहार किया तो दुःख का वेदन करना। दूसरा क्या कर रहा है, उसकी क्या प्रतिक्रिया है, वह किस लहजे में बोल रहा है, इस प्रकार के व्यवहार को ही यदि सुख या दुःख का आधार माना जाएगा तो सुख कहाँ से मिल पाएगा! जिसे सुख माना जा रहा है वह भी तो यथार्थ नहीं है; केवल सुखाभास है। सुखाभास में सुख की कल्पना सीप में रजत की कल्पना के समान है। ऐसा आभास व्यामोहितावस्था से होता है। जब तक व्यक्ति व्यामोहित बना रहेगा, सुख के सही स्वरूप को समझ ही नहीं पाएगा। सुख, अनुकूल–प्रतिकूल संवेदनों में सम रहने से प्रकट होता है। लाभ हो या हानि, निंदा हो या प्रशंसा, इनमें एक रस रहना, समान रस का अनुभव करना सुख है, जो नितांत आत्मनिष्ठ है और स्वयं से ही स्वयं में प्रकट होने वाला है। कभी भी दूसरों से नहीं मिल सकता। अन्यों से अपेक्षा रखना दुःख को ही आमंत्रण देना है। जब अन्य से वह प्राप्त हो ही नहीं सकता तो अन्य से उसकी अपेक्षा क्यों करना! पत्थर–मिट्टी से बनी गाय से कोई कितनी भी अपेक्षा करे, पर क्या वह दूध पा सकता है? कभी नहीं। जैसे पत्थर की गाय दूध नहीं देती वैसे ही अन्य से कभी भी सुख नहीं मिल सकता, यह निश्चित है। अतः दूसरा क्या कर रहा है, उससे तुम सुख या दुःख का संवेदन मत करो। तुम स्वयं स्वतंत्र हो। तुम्हारे अंतर् में भी वह अनंत शक्तिशाली चैतन्य विराजमान है, इसलिए तुम्हें किसी अन्य की ओर मुखातिब होने की कोई जरूरत नहीं। अन्य के साथ जो भी संबंध हैं वे संयोग से हैं। कब बिखर जाएँ कोई भरोसा नहीं। आए दिन संयोग को वियोग में बदलते देखा जा सकता है। ऐसी स्थिति में अन्य से अपेक्षा कदापि उचित नहीं है।

कार्तिक कृष्ण 14, मंगलवार, 10-11-2015

साभार- ब्रह्माक्षर

Neither Joy Nor Sorrow Can Be Got From Another

-Param Pujya Acharya Pravar 1008 Shri Ramlal Ji M.Sa.

When you entrust your weal and woe to another's care, you will come to grief for sure. Even to imagine that you will be happy is futile. Placing your weal and woe in another's hand implies experiencing anguish or joy at another's behest. It means having a sense of joy when someone behaves in a congenial manner, and experiencing angst when the behaviour is disagreeable. If you would have for your basis of weal and woe another's behaviour – what he does, how he reacts, and what the manner of his speech is - you can hardly expect to gain happiness.

And what is supposed to be joy is not the reality, it is just an inkling of joy. To imagine happiness in illusion (not reality) is akin to imagining silver in oyster. Such illusion keeps arising from the state of bewilderment; rather, it happens for sure. So long as a person remains mentally confused, he will not understand the true nature of joy. Joy manifests when equanimity holds in both favourable and adverse conditions. To remain level-headed and harmonious in the face of loss or gain, praise or blame is joy, which is entirely self- focused and manifests spontaneously within. It can never be got from another. Harbouring expectation from others is nothing but inviting misery. When it just cannot be got from another, what is the point of expecting it from another?

Can one procure milk from a cow sculpted in stone and clay? Never. Just as a stone-cow gives no milk, none else can give happiness; this is for sure. As such, do not look for experiencing weal or woe, from what the other person is doing. You are independent by yourself. That infinite, powerful, sentience dwells within you; as such, there is no need for you to countenance anybody else.

Relationships with others are all coincidence-begotten. There is no knowing when they might come asunder. It is not unoften that you find coincidence (as regards meeting) turning into parting. In such circumstances, harbouring any expectation would in no way be appropriate.

Tuesday, 10-11-2015

Courtesy- Brahmakshar

आवश्यकता या आकांक्षा

निर्णय जरूर करें

सुनहरी कलम से....

कोई बहुत बड़ा व्यवसायी एक बार किसी विशेष मीटिंग के लिए फाइव स्टार होटल में पहुँचा और वेटिंग एरिया में अपने क्लाइंट्स का इंतजार कर रहा था। ये महाशय बड़ी ही आरामदायक मुद्रा में एक पैर पर दूसरा पैर रखकर सोफे पर बैठे थे और इस कारण उन्होंने अपने जूते उतार रखे थे। सहसा एक व्यक्ति की नजर उनके मोजों पर गई और उसने देखा कि उनका मोजा बीच में से थोड़ा फटा हुआ था। उस व्यक्ति ने फटे हुए मोजे के साथ उस व्यापारी का फोटो लेकर कुछ ऊलजलूल बातों के साथ सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर अपलोड कर दिया। अब तो उस फोटो पर 'अमुक व्यापारी कंजूस है, इन्हें कपड़े पहनने का तौर-तरीका नहीं है, ऊपरी दिखावा करते हैं', आदि-आदि सैकड़ों कमेंट आने लगे। यह सब देखकर भी उस व्यापारी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी।

कुछ दिनों पश्चात् एक चैनल पर उन्हीं व्यापारी का लाइव इंटरव्यू प्रसारित हुआ। उस इंटरव्यू में कुछ प्रश्नों के बाद मौका देखकर पत्रकार ने उसी फटे हुए मोजे को लेकर सवाल दाग दिया। व्यापारी ने बड़ी ही तन्मयता से शांत मुद्रा में जवाब दिया- ''महाशय! मेरे पास इतनी संपत्ति है कि मैं मोजों के पूरे कारखाने/फैक्ट्री का खर्चा वहन कर सकता हूँ, पर मेरे दोस्त, ये प्रकृति इस फिजूलखर्ची को वहन नहीं कर पाएगी। I can afford a factory of socks but nature can't.'' उनका यह तार्किक प्रत्युत्तर सुनकर उस इंटरव्यू को देखने वाला प्रत्येक व्यक्ति स्तब्ध रह गया।

वर्तमान में ऐसी स्थिति बन गई है कि आवश्यकता और आकांक्षा में अंतर करने की जो प्रक्रिया है वो गौण हो चुकी है। यदि जड़ वस्तु का दुरुपयोग किया जाता है तो आगम की भाषा में उसे अजीव काय असंयम कहा गया है। अजीव काय का आवश्यकतानुसार यतना से किया गया उपयोग संयम की श्रेणी में आता है। समय का दुरुपयोग तो मानव विशेष के जीवन को प्रभावित करता है, परंतु किसी भी जड़ वस्तु (materialistic thing) का उपयोग संपूर्ण प्रकृति को नुकसान पहुँचाता है। मुख्यत: निम्न प्रकार के वेस्ट प्रकृति को नुकसान पहुँचाते हैं - 1. Biodegradable, 2. Non-Biodegradable, 3. Hazardous, 4. Radioactive, 5. Solid, 6. Semi Solid, 7. Liquid, 8. e-Waste etc.

उपर्युक्त नाम देखकर शायद हम यह समझ भी नहीं पाए कि हम कौनसी इकाई का वेस्ट कर रहे हैं। यह गणित लगाना मुश्किल ही नहीं, नामुमकिन है। अगर आज की बात करें तो वर्ष 2022 से आज तक लगभग 62 मिलियन टन ई–वेस्ट हमारे द्वारा किया जा चुका है, जिसमें से अनुमानतः सिर्फ 22 प्रतिशत ही एकत्रित किया गया, बाकी का अभी भी हमारी प्रकृति को नुकसान पहुँचा रहा है। इस शेष रहे वेस्ट में 31 बिलियन किलो मेटल, 17 बिलियन किलो प्लास्टिक एवं 14 बिलियन किलो दूसरी धातुएँ शामिल हैं। हमें यह जानकार हैरानी होगी कि ई–वेस्ट में भारत का स्थान तीसरे नंबर पर है।

इस तरह के हजारों चौंकाने वाले आँकड़े हमें मिल सकते हैं, जिन पर कभी हमारा ध्यान ही नहीं जाता और न ही हमारी सोच वहाँ तक पहुँच पाती है। हमारा ध्यान तो केवल इन बातों की ओर जाता है कि किसके हाथ में लेटेस्ट स्मार्टफोन है, किसने सबसे महँगे ब्रांड के कपड़े, जूते व घड़ी आदि पहने हैं। इससे ऊपर हमारी सोच है ही नहीं।

हमारे द्वारा हर एक भौतिक विलासिता की वस्तु को परिवर्तन करने का नुकसान प्रकृति को उठाना पड़ता है। इससे हम सभी अनभिज्ञ नहीं हैं। प्रकृति द्वारा हमें समय–समय पर इशारे मिल रहे हैं, फिर भी मनुष्य आँखें मूँदकर प्रकृति का हनन कर रहा है।

शांतचित्त से चिंतन करेंगे तो पाएँगे कि ऐसी दुर्दशा का मुख्य कारण धर्म से हमारी दूरी है। एक धर्म ही है जो सही–गलत का भान कराता है। उस पर जैन धर्म तो अहिंसा, संयम, अपरिग्रह की भी सीख देता है। धर्म से जुड़ेंगे और धर्म की मानेंगे तो हमारी दृष्टि पर चढ़ा ये विलासिता का आवरण हटते देर नहीं लगेगी। जैसे ही यह आवरण हटकर सच्चाई की परख होगी, उसका सबसे अधिक फायदा स्वयं मनुष्य को ही होगा। धर्म की राह सत्य का भान कराने वाली है। अपरिग्रह का सिद्धांत ही आवश्यकता व आकांक्षा में भेद कराना सिखाता है, क्योंकि इच्छाओं का कोई अंत नहीं।

– सह–संपादिका

“ क्रिया जीवन का सहज व्यवहार है, परंतु उसके सम्यक् रूप के प्रति लोग सजग नहीं होते। परिणामस्वरूप क्रियाएँ बंध का कारण बन जाती हैं। ऐसी ही एक क्रिया खड़ा रहना भी है जिससे संबंधित जिज्ञासा उत्पन्न होने पर शिष्य ने गुरु के समक्ष निवेदन किया–''कहं चिट्ठेइ?'' भगवन्! कैसे खड़े रहें? भगवान महावीर ने उत्तर दिया– ''जयं चिट्ठेइ।'' प्रभु ने जिस छोटे से सूत्र का उच्चारण किया, उस सूत्र के विषय के साथ उनकी गहन अनुभूति जुड़ी हुई थी और उस अनुभूति के धरातल पर उतना उत्तर देना ही उन्होंने पर्याप्त समझा। उनके सामने जो समाधान लेने वाले थे वे भी प्रखर प्रतिभा के धनी थे। इतना–सा प्रतिबोध पाकर अपनी प्रखर प्रतिभा से बहुत–कुछ हासिल कर सकते थे। हम ध्यान रखें कि तीर्थंकर की देशना, आगमवाणी केवल संकेतमात्र करती है, सिर्फ टच (स्पर्श) करती है और उस संकेत को पकड़कर उस दिशा में मार्ग बनाना होता है।

– परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

धर्मदेशना

दानों में श्रेष्ठ अभयदान

- परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

वासुपूज्य जिन अंतर्यामी...

जिन दिव्य पुरुषों ने जनता पर अत्यंत कृपादृष्टि रखकर जो मार्गदर्शन दिया है, वह मार्ग नि:स्वार्थ भावना से उन्हीं के मुखारविंद से प्रस्फुटित हुआ है। उस मार्ग को अपनाकर जीवन को उसके अनुरूप बनाने, साधना के उच्च स्तरों पर आरूढ़ होने तथा अन्य सभी के जीवन-वृत्तों में सुंदरता भरने का प्रसंग है। बारहवें तीर्थंकर प्रभु वासुपूज्य की प्रार्थना में यह विशेषण आया है कि 'आप त्रिभुवन के स्वामी हैं।' यह तीन लोक का स्वामित्व क्या है और तीन लोक कौनसे हैं?

यह जो विस्तृत और विशाल भू-लोक है, जिसे मनुष्य नाप नहीं पाता, इसके तीन भाग हैं -

(1) समतल भूमि से नीचे का भाग अधोलोक कहलाता है।

(2) जहाँ मुख्य रूप से मनुष्य, तिर्यंच आदि निवास करते हैं, वह मध्यलोक है जिसे तिरछा लोक भी कहते हैं।

(3) इससे ऊपर का लोक ऊर्ध्वलोक है।

ये तीनों मिलकर ही लोक की संज्ञा पाते हैं। प्रार्थना में ऐसे तीनों लोकों का स्वामित्व प्रभु को समर्पित करके यह जन-जिज्ञासा पैदा कर दी है कि वे तीनों लोकों के स्वामी कैसे बने?

वासुपूज्य भी मनुष्य शरीर में ही उत्पन्न हुए थे और एक राज्य के राजकुमार तथा बाद में उसके स्वामी के रूप में थे। उस समय उनका स्वामित्व तिरछे लोक में भी पूरा नहीं था। अमुक सीमा तक ही उनका राज्य था। फिर उस राज्य का भी उन्होंने आत्म कल्याण के पथ पर अपना चरण रखकर त्याग कर दिया था। तब उनके तीन लोक के स्वामित्व संबंधी इस कथन का क्या अभिप्राय?

तीन लोक का स्वामित्व कहाँ?

प्रभु वासुपूज्य की एक समतामयी दृष्टि थी। वे अपने परिवार के सदस्यों को भी उसी दृष्टि से देखते थे तो तीनों लोकों में रहने वाले समस्त चराचर जीवों को भी उसी समान दृष्टि से। चराचर जीवों में संसार के समस्त जीवों का समावेश हो जाता है। वे ऐसे समस्त जीवों के संपूर्ण परिवार को ही अपना पूरा आत्मीय परिवार समझते थे।

एक हकीकत यह भी समझिए कि इस प्रकार आत्मीयता के संपूर्ण विस्तार को जानना और मानना तो आसान है, लेकिन उसके अनुसार अपने समग्र व्यवहार को बनाना तथा सभी कार्य संपन्न करना अत्यंत कठिन ही नहीं, व्यापक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण भी है। यही महत्त्वपूर्ण कार्य प्रभु ने संपादित किया। अपने छोटे और संकीर्ण परिवार की सीमाओं को फैलाकर वे संसार के विशाल परिवार से जुड़ गए। वे साधु धर्म ग्रहण करके

कठिन साधना में लग गए। उनकी वह साधना मन, वचन, काया के तीनों योगों में थी। तब उनकी आत्मीयता समस्त जगत् और जगत् के समग्र जीवों तक विस्तृत बन गई।

आत्मीयता का सर्वत्र विस्तार कैसे होता है, इसे भी समझ लें। प्रभु जब साधना में निमग्न हुए तो उन्होंने चिन्तन किया कि मैंने अपने पूर्व जन्मों में जो पाप कार्य किए, करवाए अथवा उनका अनुमोदन किया, उनके प्रक्षालन के उद्देश्य से ही मैंने तीन करण, तीन योग की साधना स्वीकार की है। यह तो मेरे अपने ही हित की दृष्टि से है, किंतु सारे संसार को मैंने अपना परिवार समझा है, मुझे सोचना है कि मैं उसके हित के लिए क्या करूँ? अन्य जन्मों और इस जन्म में भी अब तक मैं इस ओर अपना वांछित ध्यान नहीं लगा पाया हूँ, लेकिन अब तो मैं सबको सुख और शांति का मार्ग दिखा सकूँ तभी अपने जीवन की सार्थकता मानूँगा। अपनी साधना में उन्होंने इस प्रकार 'स्व' के साथ 'पर' के हित का उद्देश्य भी जोड़ लिया। इसके साथ ही वे सहनशील, करुणाशील और क्षमाशील बन गए। कोई उन्हें कैसा भी कष्ट देता, वे समभाव से उसे सह लेते। वे अपनी कामनाओं से ऊपर उठ गए और नवीन कर्मों के बंध का निरोध करते हुए निष्काम भाव से परोपकारी बन गए। उन्होंने शुद्ध परिपूर्ण ज्ञान और उसके साथ समभाव का विकास किया तथा अहिंसा आदि महाव्रतों की आराधना भी उच्चतम भावों के साथ सफल बनाई।

इस प्रकार उन्होंने अपने समुन्नत निजत्व को संपूर्ण जगत् तक व्यापक बना दिया, यानी कि उनका जीवन संपूर्ण जगत् के जीवों के साथ आत्मीयता के रूप में एकरूप बन गया। तब वे स्वयं तीन लोक के बन गए। जब तीन लोक के बन तो सारे संसार की दृष्टि उन्हें अपने स्वामी के रूप में देखने लगी। फिर भला कवि भी उन्हें 'तीन लोक के स्वामी' के सिवाय अन्य किस विशेषण से संबोधित करता!

तीन लोक के स्वामित्व का आधार : अभयदान

इस प्रकार प्रभु वासुपूज्य अष्ट-सिद्धि, नव निधि आदि समग्र लोक की विपुल ऋद्धियों को त्यागकर तीन लोक के समस्त जीवों के मित्र और हितैषी बन गए। ऐसे दयामय मित्र और हितैषी को भला कौन स्वामी नहीं मानेगा? वे तीन लोक के स्वामी कहलाने लगे। वे परिपूर्ण ज्ञानी और भगवान हो गए।

किंतु ऐसा पद उन्होंने कैसे प्राप्त किया? क्यों वे तीन लोक के स्वामी कहलाए? इस पद का आधार क्या था?

एक शब्द में इसका उत्तर दिया जाएगा तो वह होगा – **अभयदान**। उन्होंने अपने मन, वचन एवं कर्म से संसार के समस्त जीवों को अपनी ओर से अभयदान प्रदान किया। सूयगडांग सूत्र के छठे अध्ययन में कहा गया है –

'दाणाण सेठं अभयप्पयाणं'

अर्थात् सभी प्रकार के दानों में अभय प्रदान करना श्रेष्ठ दान कहलाता है। जो मन, वचन एवं काया के योगों से हिंसा से विरत होने का प्रण करते हैं तथा संपूर्ण प्राणियों की रक्षा का संकल्प लेते हैं, वे अपनी आंतरिकता में अभयदान का सफल बीजारोपण कर देते हैं। सकल सावद्य योगों का त्याग करके वे स्वयं अभय बनते हैं और समस्त प्राणियों को अभयदान देते हैं। जब तीर्थंकर दीक्षा लेते हैं, उस समय वे सिद्ध भगवंतों को वंदन करते हैं। पूर्व के तीर्थंकरों के पास वे नहीं जाते और न ही उनके द्वारा उपदेशित शास्त्रों को वे पढ़ते हैं। अपनी माता की कुक्षि में ही उन्हें तीन ज्ञान प्राप्त होते हैं – मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान तथा अवधिज्ञान। पाँचों इंद्रियों और मन के स्वरूप तथा उनके क्रियाकलापों को जानना व परखना मतिज्ञान कहलाता है और उनको विशेष रूप से जानना श्रुतिज्ञान। दूरस्थ पदार्थों को जानना-देखना अवधिज्ञान होता है।

तीर्थंकर देवों की प्रारंभिक भावना ही सिद्ध पद प्राप्त करने की होती है तथा भावना का बड़ा महत्त्व होता

है। भावना से ही पाप कर्म बँधते हैं तो भावना से ही वे छूटते हैं। भावना बनाने की भी अपनी भावना होनी चाहिए कि वह शुभत्व की ओर गतिशील बने। आप कभी अपनी भावना बनाइए ताकि अपनी ही भावना की जाँच-परख कर सकें। उससे यदि आपको प्रतीत हो कि आप सब प्राणियों ('किन्हीं' को छोड़कर भी) को कष्ट पहुँचाने की कोई भावना नहीं रखते हैं तो उसी समय वैसा त्याग आपको ग्रहण कर लेना चाहिए। इसी त्याग को यह व्रत कह लीजिए कि आप सभी प्राणियों को अभयदान देने वाले व्रती बन गए हैं।

जब किसी को कष्ट देने की भावना ही नहीं रहेगी तो कर्म बंधन क्यों होगा और क्यों पापी कहलाएँगे! यह चिंतन करने का विषय है कि जब मन में किसी को मारने की भावना ही नहीं थी तो उन्होंने सभी सावद्य योगों का त्याग करके साधु धर्म क्यों ग्रहण किया? इसका कारण यही था कि जब भावना में परिपक्वता आ जाए तो उस समय इस प्रकार का त्याग कर लेना चाहिए। संकल्प की सुदृढ़ता और कार्यान्वितता तभी बनती है जब भावना की परिपक्वता एवं पुष्टता हो। ऐसे भावनापूर्ण त्याग के साथ साधना को पूर्णरूपेण बल मिल जाता है।

भय और अभय की स्थितियाँ

भय और अभय के संबंध में इस मन की तीन प्रकार की स्थितियाँ हो सकती हैं -

1. ज्यों ही भावना पक्की बनी कि अमुक को या अधिक को मारने या कष्ट देने की मेरी कोई भावना नहीं है तभी इस प्रकार का त्याग ले लिया जाए, जिससे वह भावना एक व्रत में ढल जाती है और वह व्रत जीवन का अंग बन जाता है। जब यह भावना बन जाए कि इस संसार में किसी भी प्राणी को नहीं मारना या किसी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं पहुँचाना तो पूर्व पुरुषों के आदर्श उदाहरणों के समान ही सभी सावद्य योगों का त्याग करके पूर्ण अहिंसा व्रती यानी कि साधु बन जाना चाहिए।

2. दूसरी मानसिक स्थिति यह हो सकती है कि अमुक को या सबको न मारने और कष्ट नहीं देने की भावना तो बनी और जब वह बनी तब उसमें परिपक्वता भी थी, लेकिन तदनुसार त्याग नहीं किया, यह सोचकर कि भावना पक्की है तो त्याग की क्या जरूरत है, किंतु मन तो चंचल होता है। कई बार उसे स्थिर रखने का पूरा प्रयास होते हुए भी वह फिसल जाता है। ऐसी अवस्था में त्याग नहीं करने के कारण व्रत का बंधन नहीं होने से वही मन अहिंसा से फिसलकर फिर से हिंसा में लिप्त हो सकता है।

3. तीसरी स्थिति तो एक हिंसक की होती ही है जो अपने आतंक से सबको भयभीत करना चाहता है और अपने पाप कर्म की जघन्यता को समझता भी नहीं अर्थात् हिंसा त्याग की उसकी वैसी भावना ही नहीं बनती।

इस प्रकार एक विचारशील पुरुष अहिंसक बनकर वैसा त्याग लेकर सबको अभयदान देने वाला बन जाता है, जबकि एक हिंसक सबको भयभीत करता रहता है। किंतु उस मन की स्थिति पर तरस आता है जो कि अहिंसा के निर्वैर और निर्भय स्वरूप को पकड़ता भी है, लेकिन वैसा व्रत धारण न करने की बुद्धिहीनता या प्रमाद से अपनी भावना के प्राप्त शुभत्व को भी खो देता है। ऐसी खुली मन:स्थिति ही घातक मानी गई है। ज्ञानियों की दृष्टि में मन, वचन एवं काया रूप, ये तीनों माध्यम जब तक व्रती नहीं बने और खुले हैं तब तक तीनों शस्त्र रूप माने जाएँगे। इन तीनों को वैसी दशा में नंगी तलवारों की संज्ञा दी जा सकती है। यह एक तथ्य है कि नंगी तलवार को किसी के हाथ में देखकर हर कोई त्रस्त और भयभीत होगा। उसे उसकी तरफ से अभयदान नहीं मिलेगा।

अभयदान छहों काया के जीवों को

मन, वचन और काया की नंगी तलवारें चाहे वार न भी करें तब भी देखने वाला उनसे अवश्य भयभीत होता है, क्योंकि उनका वार बड़ा तीक्ष्ण माना गया है। एक के हाथ में नंगी तलवार हो और वह वार नहीं करेगा, ऐसा सामान्य रूप से विश्वास नहीं होता। अत: उसका

भयातंक तो रहता ही है। यह तो निश्चय है कि उसके हाथ में रहते सामने वाला अभय तो रह ही नहीं सकता, चाहे नंगी तलवार वाला घोषणा भी कर दे कि वह किसी पर वार नहीं करेगा। सबको अभयदान तभी मिल सकता है, जबकि वह अपनी नंगी तलवार को म्यान में रखकर अपने से अलग कर ले।

इस कारण अहिंसा वृत्ति की भावना बन जाने के साथ ही जो तदनुसार त्याग नहीं करता, प्रतिज्ञा नहीं लेता, वह इस रूप में रहता है जैसे कि तीनों नंगी तलवारें उसने अपने हाथों में ले रखी हों। वे तलवारें किस समय किस पर चल पड़ें इसका कोई विश्वास नहीं रहता। इसलिए इन योगों को पापकारी ही कहा जाता है।

सावद्य योगों का त्याग करने के लिए वीतराग देवों ने विधि बताई है और वह विधि उन्होंने अपने व्यावहारिक आदर्श से बताई। तीर्थंकर देव स्वयं भावना की परिपक्वता एवं पुष्टता के साथ सभी सावद्य योगों का त्याग करके साधु धर्म अंगीकार करते हैं और छहों काया के जीवों को अपनी आत्मा के तुल्य मानकर अभयदान देते हैं कि संसार के समस्त प्राणी निर्भय और अभय बनें।

किसी एक प्राणी का, कई प्राणियों का या सभी प्राणियों का अपनी ओर से भय निवारण एक त्यागमय शुभ कार्य माना गया है। भय निवारण का यही अर्थ होगा कि आप उतने अंशों में हिंसा का त्याग करके अहिंसाव्रती बन गए हैं, जबकि एक साधु अहिंसा का महाव्रती बनकर समस्त प्राणियों को अभयदान देने के उच्च स्तर तक पहुँच जाता है। रात्रि के प्रश्नोत्तर के प्रसंग से आए हुए कुछ प्रश्नों का, जो इस विषय से संबंध रखते थे, यहाँ पर स्पष्टीकरण कर रहा हूँ। एक पुरुष हाथ में नंगी तलवार लेकर एक निहत्थे जनसमुदाय के सामने पहुँचा। उस समय उसका चेहरा भी खूँखार बना हुआ था। उसे देखकर (उसके बिना बोले ही नंगी तलवार हाथ में देखकर) वह समुदाय भयभीत हो गया। क्यों ? कारण, यह विश्वास नहीं था कि वह क्रूर हिंसा के कुप्रभाव से किस समय किस पर तलवार का वार कर बैठे। उस समय उस समुदाय के सभी व्यक्ति भयभीत होकर उसके प्रति बुरी भावना बना लेंगे। भले ही उस खूँखार पुरुष की भावना किसी को मारने की न हो तब भी वह नंगी तलवार खुद भय का कारण होती है। माना यह जाएगा कि तलवार म्यान से बाहर ही तब निकाली जाएगी जब किसी प्रकार की क्रूर हिंसा के विचार मन को घेर लेंगे। अब इस रूपक को आगे समझिए कि नंगी तलवार हाथ में लिए उस पुरुष ने उस जनसमुदाय के सामने यह कहा कि वह उनमें से सिर्फ एक व्यक्ति को मारेगा। तब भी पूरा समुदाय भयभीत रहेगा, यह न जानते हुए कि वह व्यक्ति कौन है। फिर वह कहता है कि अमुक देश के व्यक्ति को मारेगा। तब उस देशवासी से अन्य सभी व्यक्ति अभय बन जाएँगे। फिर वह उस देश के एक नगर का नाम लेता है कि वहाँ के एक व्यक्ति को मारेगा। तब उस नगर के सिवाय उस देश के अन्य सभी व्यक्ति अभय हो जाएँगे। अंत में वह कह देता है कि उस नगर के अमुक व्यक्ति को वह मारेगा, तब उस पूरे समुदाय में सिर्फ कथित व्यक्ति के अलावा सभी अभय हो जाएँगे।

अब बताइए कि नंगी तलवार का भय कितने लोगों से शुरू हुआ और अपना इरादा साफ करते रहने से केवल एक व्यक्ति के लिए ही तलवार का भय तब भय रूप में रह गया, शेष सभी अभय हो गए। किंतु तभी उसने आगे बढ़कर घोषणा कर दी कि वह उस कथित व्यक्ति को भी नहीं मारेगा। ऐसा कहकर उसने तलवार म्यान में रख दी। तब सभी अभय हो गए।

मन, वचन और काया की तलवारें उन्हें काम में न लेने की भावना के बावजूद जब तक नंगी रहेंगी, सभी प्राणी भयभीत रहेंगे और सबकी नंगी तलवार वाले के लिए बुरी भावना होगी। उपर्युक्त रूपक में ज्यों-ज्यों वह अपने इरादे को साफ करता गया, त्यों-त्यों अभय का वातावरण बनता गया। इसी क्रम को व्रत ग्रहण करने की रोशनी में देखिए। ज्यों-ज्यों और जितनों के प्रति अपनी

हिंसक भावना छूटती जाए, त्यों-त्यों उतनों के प्रति यदि अहिंसा और अभयदान का व्रत ग्रहण किया जाता रहे तो यह समझिए कि उसकी नंगी तलवारें उस रूप में म्यान में चली जा रही हैं। भावना बने और व्रत न लिया जाए तो वह स्थिति न अपने हित में रहती है और न दूसरों के हित में। कारण, बाहर से नंगी दिखाई देने वाली तलवारें संसार के सारे प्राणियों को भयग्रस्त बनाती रहती हैं। चाहे उनका वार किया जाए अथवा नहीं। इसलिए नंगी तलवारों को म्यान में डालना यानी कि अहिंसा व्रत से अपने मन को बाँधना अनिवार्य है।

अभयदान से समभाव की ओर

दु:खों से भयभीत जीवों को भयरहित करना ही सच्चा अभयदान है। सभी दानों में अभयदान को परम श्रेष्ठ कहा गया है। इसकी परम श्रेष्ठता तब प्रकट होती है जब छह काया के समस्त सांसारिक प्राणियों को अपनी ओर से अभयदान दे दिया जाता है। ऐसा ही अभयदान तब आत्मभावों को सबके प्रति समभाव की दिशा में प्रेरित करता है।

वासुपूज्य भगवान् ने समग्र विश्व के प्राणियों को अभयदान देने की सद्भावना से तीन करण तीन योग की प्रतिज्ञा लेकर अपनी उन तलवारों को व्रत की म्यान में बंद कर दिया। तत्पश्चात् जब लोगों ने उनका अपमान किया, उन्हें कष्ट दिया तब उन्होंने उस अपमान और कष्ट को समभाव के साथ सहन किया। किसी भी प्राणी के प्रति कष्ट देने की भावना उनकी नहीं रही।

इसलिए आज गहराई से विचार करने का समय है कि जो व्रत नहीं ले रहे, वे प्राणियों को भयभीत कर रहे हैं और प्राणियों को भयभीत कर रहे हैं तो वे समभाव की मन:स्थिति से बहुत दूर माने जाएँगे। इसका कारण है कि उन्होंने मन, वचन, काया की नंगी तलवारें अपने हाथों में पकड़ रखी है। किंतु संत यावज्जीवन सारे सावद्य योग व्यापार का त्याग करके चलते हैं कि हमारे निमित्त से मन से, वचन से, काया से किसी को भी किसी रूप में भय न हो। संतों का यह प्रतिज्ञा-व्रत होता है। वे साधु धर्म ग्रहण करके यह सुनिश्चित संकल्प लेते हैं कि जगत् के किसी भी प्राणी को तीन करण, तीन योग से नहीं मारेंगे और न ही कष्ट पहुँचाएँगे। रजोहरण उनके पास रहता है, जिससे यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि वे समभावपूर्वक सभी प्राणियों की रक्षा करेंगे। ध्यान रखिए कि तलवार पूरी तरह से म्यान में डाल देने पर रजोहरण हाथ में आ जाता है। जीवहत्या से दूर हटकर जीवरक्षा और जीवदया का इस परिवर्तित जीवन में नया अध्याय शुरू हो जाता है। संत इसी कारण दिन को देखकर और रात को रजोहरण से पूँजकर चलते हैं ताकि किसी प्राणी को हिंसा भरा आघात न पहुँचे। चींटी तो दूर रही, अनाज के दाने का छोटा-सा जीव भी उनसे पीड़ित न हो। इसका वे हर समय पूरी सतर्कता से ध्यान रखते हैं। यही आशय है कि वे रात में विहार करके एक गाँव से दूसरे गाँव नहीं जाते, लेकिन शारीरिक बाधा निवृत्ति के लिए अथवा ज्ञानचर्चा हेतु एक कमरे से दूसरे कमरे में जाना पड़े तो रात्रि में पूँजकर ही चलते हैं। संतजन मुख पर मुखवस्त्रिका भी बाँधते हैं, जिसका भी यही लक्ष्य है कि वायुकाय के सूक्ष्म जीवाणु भी मुँह की गरम हवा या बोलने के कँपन के कारण संत्रस्त न बनें। वायुकाय की रक्षा के लिए मारने की भावना नहीं होते हुए भी सावद्य भाषा को टालने के लिए मुखवस्त्रिका का स्थायी रूप से उपयोग किया जाता है। छहकाय के जीवों की रक्षा के ही उद्देश्य से संतजन रेल, ताँगा, हवाई जहाज, कार आदि किसी भी वाहन का प्रयोग न करके केवल पदयात्राएँ ही करते हैं। कारण, किसी भी वाहन के द्वारा जीवहत्या की आशंका बनी रहती है। किसी भी प्रकार की हिंसापूर्ण भावना न रखना, सर्वजीवों को अभयदान प्रदान करना तथा जीवों की रक्षा एवं दया हेतु सदैव व सर्वत्र तत्पर बने रहना यही समभाव की प्रतीक मन:स्थिति होती है।

गृहस्थ जीवन और अभयदान

परिपूर्ण ज्ञानियों ने बतलाया है कि साधु जीवन को अंगीकार करने की संसार के सभी जीवों की क्षमता

नहीं होती है। अत: उनके लिए उन्होंने निर्देश दिया है कि वे गृहस्थावस्था में रहते हुए भी यथाशक्य अधिकाधिक अभयदान प्रदान करने का उपक्रम करें। यों भी दस-पंद्रह, पचीस मंजिला भवन बनाने का इरादा हो तब भी उसका नींव से ही निर्माण आरंभ करना पड़ेगा। गृहस्थ जीवन को इस नींव के निर्माण से नीतिपूर्वक संचालित किया जा सकता है। इस कारण गृहस्थों को निराश होने की आवश्यकता नहीं। वे अपने बहुमंजिला भवन का शिलान्यास करके नींव व नीचे का निर्माण पूरा कर सकते हैं। स्थायी रूप से मन, वचन एवं काया के सावद्य योग व्यापार की तलवारें म्यान में न डाल सकें तो समय-समय पर कुछ समय के लिए तो उन्हें म्यान में डालते रहने का अभ्यास बनावें।

आप लोग परिवार के निर्वाह की दृष्टि से व्यापार, नौकरी या अन्य कोई धंधा करते हैं, खेती भी करते हैं। सब धंधों में कहीं न कहीं जीव हिंसा के अवसर आते रहते हैं। कई बार वह हिंसा प्रकट रूप में नहीं भी दिखाई देती। विवेकशील पुरुष उस हिंसा को महसूस कर लेता है और विवशतापूर्वक उतनी हिंसा खुली रख लेता है, किंतु बाकी सारी हिंसा का वह समझपूर्वक त्याग कर लेता है। वह अहिंसा व्रत को धारण करने वाला विवेकशील गृहस्थ यही भावना रखता है कि मैं जीवित रहूँ और मेरे परिवारजन, पड़ोसी आदि अन्य सब भी जीवित रहें। उस दृष्टि से सावद्य योग व्यापार पर एकदेशीय नियंत्रण ही रख लूँ। 'जीओ और जीने दो' की व्यावहारिक भावना रखते हुए भी एक गृहस्थ अभयदान के क्षेत्र में अपनी उल्लेखनीय सेवाएँ दे सकता है।

इस एकदेशीय त्याग का यह अर्थ लिया जाए कि गृहस्थ को जीवन के निर्वाह में विवशता से हिंसा की अनिवार्य क्रिया करनी पड़े वह तो छूट है, लेकिन व्यर्थ के हिंसापूर्ण कार्यों के पाप से तो सावधानीपूर्वक बचा ही जाए। ऐसा व्रत ग्रहण कर लेने के बाद वह गृहस्थ कभी भी आक्रांता नहीं बनेगा, क्योंकि उसकी दृष्टि सदैव आध्यात्मिकता की ओर रहेगी। इतना ही नहीं, एकदेशीय व्रती गृहस्थ दूसरों से भी यथासाध्य हिंसा छुड़वाने की कोशिश में लगा रहेगा। नीतिपूर्वक व्यवहार करते हुए भी यदि सामने वाला हिंसा पर उतरता है तो यथावसर वह गृहस्थ उसे दंड देने को भी स्वतंत्र है, क्योंकि आत्मरक्षा के लिए मजबूर होकर वह हिंसा का प्रयोग करने को स्वतंत्र है। उसका उसे त्याग नहीं होता। केवल आक्रांता की दुर्नीति को हटाने के लिए वह आगे बढ़ता है। उसको मारने की उसकी भावना नहीं रहती। गृहस्थ अवस्था में रहते हुए दंड नीति खुली रहती है। इस तरह एक गृहस्थ प्रथम अहिंसा व्रत की प्रतिज्ञा लेकर एकदेशीय रूप से मन, वचन, काया की सावद्य योग रूप तलवारों को म्यान में रखकर चलता है तथा इस रूप में वह संसार के प्राणियों को अभयदान प्रदान करता है।

अभयदानी अहिंसा व्रत

अभयदान का प्रसार करने वाले प्रथम अहिंसा व्रत की संक्षिप्त परिभाषा यह है कि निरपराध त्रस जीवों को संकल्प करके नहीं मारना। अब आप सोचिए कि क्या एक गृहस्थ इतना-सा व्रत भी नहीं ले सकता? गृहस्थाश्रम के निर्वाह में इससे कहाँ बाधा आती है? स्पष्टता के लिए चेड़ाकोणिक का प्रसंग शास्त्रों में है। चेड़ा महाराज अठारह गणराज्यों के अध्यक्ष थे तो भगवान महावीर के देशव्रती श्रावक भी थे। संसार के सभी प्राणियों की शांति कामना रखते हुए भी अपराधी को दंड देने के लिए वे स्वतंत्र थे। दंड भी कैसा दिया उन्होंने कि अन्याय का प्रतिकार करने के लिए कोणिक के साथ पूरा युद्ध लड़ रक्तपात किया फिर भी उनका श्रावक व्रत अक्षुण्ण रहा। रामायण भी ऐसे प्रसंगों से भरी पड़ी है जब गृहस्थाश्रम में रहते हुए अन्याय और अनीति का हिंसा की विधि से विरोध करना पड़ा।

भावना और विवशता के इस अंतर को भी समझ लेना चाहिए। एक श्रावक की भावना सदैव यही रहनी चाहिए कि वह संसार के किसी भी प्राणी के प्रति हिंसात्मक क्रिया न करे तथा सबकी सुख-शांति की सदा कामना रखे। इस कामना को रखते हुए अन्याय या

अनीति के विरोध के लिए अथवा गृहस्थ धर्म का अनुपालन करने के लिए या आत्मरक्षा में अपराधियों के प्रति विवशतापूर्वक ही वह हिंसा का सेवन करे। इसका अभिप्राय यह है कि हिंसा का विवशता से सेवन करते हुए भी सर्वहितकारी एवं सर्वकल्याणकारी भावना उसके हृदय में बनी रहे। यही नहीं, उस विवश हिंसा के लिए उसके मन में ग्लानि और प्रायश्चित्त भी पैदा हो। हिंसा का वह प्रयोग उसकी भावना को किसी भी रूप में विकृत न बनावे।

अभयदान के मार्ग पर गति तो शुरू करें

आज के युग में प्रत्येक विवेकशील गृहस्थ को इस पहले अहिंसा अणुव्रत की पालना करने में कोई रुकावट नहीं होती हो तो इसे ग्रहण कर लेना चाहिए, ताकि अभयदान के मार्ग पर गति तो शुरू हो सके। यह गति जब निष्ठापूर्वक शुरू हो जाएगी तो एक दिन अहिंसा महाव्रत धारण करके पूर्ण अभयदानी भी हो सकेंगे और त्रिभुवन के स्वामी भी बन सकेंगे।

इसलिए समझ लें कि त्याग और प्रत्याख्यान का अमित महत्त्व है। इनके बिना भावना ही कई बार मूल्यहीन हो जाती है, लेकिन भावना को व्रत-प्रत्याख्यान से बाँध लें तो वह स्थायी बनकर अभयदान का सुदृढ़ स्तंभ बन जाती है। प्रथम व्रत को स्वीकार करने का सुफल यह होगा कि हिंसा संबंधी समुद्र का जितना पाप आपको लगता था, वह घड़े के पानी जितनी सीमा में सिमट जाएगा। अत: चिंतन करें।

साभार- नानेशवाणी-50 (अध्यात्म का कुआँ)

"स्वागत शब्द स्व+आगत से बना है। इसका अर्थ है स्व में आ जाना। अब सोचिए कि कोई भी स्व में आगत कैसे हो सकता है? स्व का आशय है अपनी ही आंतरिकता, अपनी ही आत्मा, अत: अपनी आत्मा में आने का अर्थ होगा कि हमारी दृष्टि बाहर से भीतर की ओर मुड़े। इस दृष्टि-मोड़ के बाद ही हमें दिखाई देगा कि हमारी आंतरिकता कैसी है? वहाँ कितना मैल है? और कितनी सफाई है? या कितना अंधकार है और कितना प्रकाश है? जब कालिमा और स्वच्छता अथवा अंधकार और प्रकाश का तुलनात्मक लेखा-जोखा लिया जाएगा, तभी विदित होगा कि हमारी वास्तविक स्थिति क्या है। तब उस स्थिति का विश्लेषण ही हमें सच्चे प्रगति-पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देगा।

इस कारण मूल में स्वागत यानी स्व में प्रवेश आवश्यक है। बाह्य दृष्टि का आंतरिकता में समा जाना अनिवार्य है। भौतिकता का समुचित मूल्यांकन करते हुए यही आध्यात्मिकता का मार्ग है।

आप सभी स्वागत के लिए ही उपस्थित हुए हैं। तब करिए स्वागत! प्रविष्ट हो जाइए अपने भीतर में। है आपकी ऐसी तैयारी? लेकिन मैं समझता हूँ कि आपकी ऐसी भावना अवश्य होगी कि अपनी दृष्टि की दिशा को परिवर्तित करें और स्वागत के महत्त्व को समझकर इस मंगलगृह में सर्वमंगल की पृष्ठभूमि का निर्माण करें। ज्यों ही मानव निज स्वरूप को समझने की जिज्ञासा करता है, वह अपने भीतर झाँकता है और भीतर के शुद्धिकरण की तरफ अपने ध्यान को दौड़ाता है। इस शुद्धिकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत ही वह सर्वहित की सुकोमल भावनाओं से आप्लावित होता है, क्योंकि अपनी उत्कृष्ट भाव श्रेणी में उसे स्वहित और सर्वहित आपस में जुड़ा हुआ दिखाई देता है। स्वहित एवं सर्वहित का संगम ही सर्वमंगल की आलोकमय दिशा में अग्रसर बनाता है।

- परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

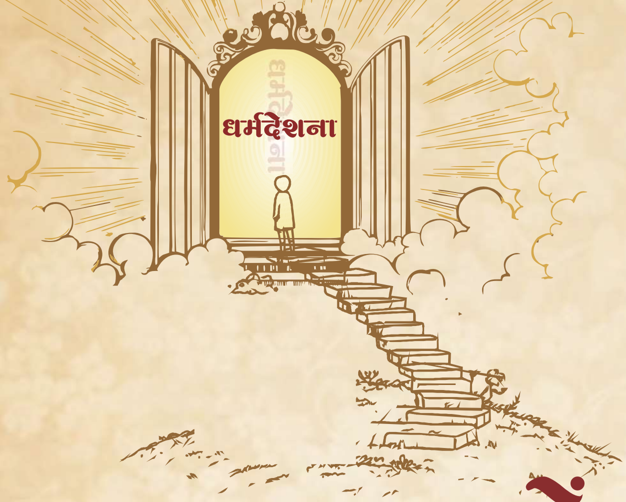

निज स्वरूप की साधना : अध्यात्म में प्रवेश का मार्ग

- परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

श्रेयांसनाथ भगवान ने आध्यात्मिकता को उसकी संपूर्णता में प्राप्त कर लिया था। ऐसी पूर्णता की प्राप्ति के बाद तीर्थंकर देव भव्यात्माओं के कल्याण के लिए जो देशना देते हैं, उसके आधार पर भव्यात्माएँ अध्यात्म की दिशा में गतिशील होती हैं। यदि गहराई से विचार करें तो आध्यात्मिकता की ऐसी अवस्था कहीं बाहर से नहीं, हमारे भीतर से ही उपलब्ध होती है। उसे उपलब्धि भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि वह तो स्वत: उपलब्ध होती है, नए सिरे से प्राप्त नहीं करना पड़ता। वह तो विद्यमान है, भले ही दृष्टि से ओझल हो। उसे दृष्टि में लाना होता है। यही उसे उपलब्ध करना है, प्राप्त करना है। इस संदर्भ में यह याद रखना भी आवश्यक है कि प्राप्त वही होता है जो हमारा है, नया कुछ प्राप्त नहीं होता। इसे यों समझें कि हमारा जो स्वरूप है उस पर आवरण आ गया है अथवा जो हमारा है वह पर्दे की ओट में आ गया है। पर्दा हटा नहीं कि वह हमारे सामने आ जाएगा। आवश्यकता है उस पर्दे को हटाने की। सामान्यत: व्यक्ति को यह बोध ही नहीं होता कि जिसे वह खोज रहा है वह तो स्वयं के पास ही विद्यमान होता है। वह वैसी ही स्थिति होती है जैसी कस्तूरी मृग की होती है। मृग उस कस्तूरी को, जो उसकी स्वयं की नाभि में होती है, जंगल के कोन-कोने में ढूँढ़ता फिरता है। ऐसे ही अज्ञान को लक्ष्य कर संत कवि कबीरदास जी ने कहा है -

तेरा सोई तुझ में, ज्यों पुहपुन में बास।
कस्तूरी का मिरग ज्यों, फिर-फिर ढूँढ़े घास।।

पर बात उस गंध को, निज-स्वरूप को पहचानने की है।

एक उदाहरण लें। एक भिखारी भीख माँग रहा है। उसकी जेब में एक चाबी पड़ी है। खजाना भी मौजूद है, पर वह चाबी अपनी जेब में रखकर भूल गया है। कई लोग भुलक्कड़ होते हैं, भूल जाते हैं। चाबी उसकी जेब में है, खजाना भी सुरक्षित है, पर चाबी टटोलने की उसे फुर्सत नहीं। सुबह से शाम तक वह माँगता है और माँगते-माँगते तो कुछ प्राप्त हो जाता है, शाम को फुर्सत मिलने पर उसे तोड़ने में, गिनने में लग जाता है। गणना तो करोड़पति भी करता है, हिसाब-किताब यदि करोड़पति करता है तो गरीब भिखारी भी करता है। मात्रा में अथवा परिमाण में अंतर हो सकता है। एक का परिमाण लाखों-करोड़ों का होगा, तो भिखारी का शायद सैकड़ों में। गणित दोनों करते हैं। भिखारी के हाथ निरंतर बाहर की ओर ही रहते हैं, दिन में माँगने में और शाम को हिसाब-किताब करने में। वैसे ही व्यक्ति जब तक मन को बाहर ही बाहर भटकाता है, तब तक उसे भीतर की खोज की

फुर्सत नहीं मिलती। वह नहीं जान पाता कि चाबी कहाँ है, खजाना कहाँ है। यद्यपि वह पास में ही है, लेकिन उस पर उसकी निगाह नहीं पड़ती क्योंकि उसका ध्यान बाहर की ओर होता है। जब तक हाथ बाहर हैं, अंदर की वस्तु को टटोला नहीं जा सकता।

एक व्यक्ति हिंसा करता है, उसे आप पापी कहते हैं। एक व्यक्ति अपने को अहिंसक मानकर चल रहा है, उसे आप क्या कहेंगे? आप विचार में पड़ जाएँगे? यदि वह स्वयं को अहिंसक दर्शाकर चल रहा है, तो भगवान कहते हैं कि वह भी पाप कर रहा है। दर्शाना क्या है? जो स्वभाव है उसका प्रदर्शन क्या करना? यदि वह अहं करता है तो आचारांग स्पष्ट कहता है- एक व्यक्ति हिंसा करता है, झूठ बोलता है और दूसरा अहिंसक होकर अहिंसा का, सत्य का दंभ कर रहा है तो वह स्वयं पाप की श्रेणी में जा रहा है। जो नहीं करना चाहिए, वह कर रहा है। वह तो पतन की ओर जाएगा ही, दंभ करने वाला भी पतन की ओर ही जाएगा। एक व्यक्ति दान कर रहा है तो वह वास्तव में क्या कर रहा है, यह उसकी मानसिकता पर निर्भर करेगा। लोग सोचेंगे कि वह धन से अपनी ममता हटा रहा है, अपरिग्रही बन रहा है, परंतु अपरिग्रही बनना बहुत कठिन है। एक व्यक्ति कुछ नहीं देता हुआ भी अपरिग्रही है और एक बहुत-सा दान देता हुआ भी अपरिग्रही नहीं है। कारण के लिए द्रव्य का स्वरूप जानना होगा। किसी भी चीज को जोड़ते हैं तो वह है- **परिग्रह**, तोड़ते हैं तो वह है- **अपरिग्रह**। आप विचार करेंगे, दान से उसने छोड़ा है, तोड़ा नहीं। उसे दान की श्रेणी में नहीं लिया जा सकता, भले 10-20 हजार रुपए दे दिए।

एक दंपत्ति महात्मा के पास पहुँचे। थोड़ी देर बैठे। सेवा-उपासना करने के बाद कहने लगे—कोई सेवा-कार्य हो तो बताइए। महात्मा ने कहा—आपकी अच्छी भावना है। बहन ने कहा—महात्मन्! ये तो करते ही रहते हैं। अब तक एक लाख का दान कर चुके हैं। पति ने सुधारा—एक लाख दस हजार का दान दिया है। इस प्रकार हम देखें कि वह दान देकर भी, छोड़कर भी जोड़ रहा है कि कितना दिया। वृत्तियों से कुछ जोड़ता है। ये भाव, ये वृत्तियाँ कि मैंने इतना दिया, इतना दान दिया, तो बस समझ लीजिए कि इन वृत्तियों के कारण वह परिग्रही बन गया, अपरिग्रही नहीं रह पाया।

दान की परिभाषा करते हुए तत्त्वार्थ सूत्र में कहा गया है—**'अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानं'**। स्व का त्याग हो। जिसे त्याग दिया, फिर उस तरफ निगाह नहीं दौड़ानी चाहिए। आपने वमन कर दिया तो क्या उसे बार-बार देखेंगे, सूघेंगे? उसका पुन: उपयोग करना चाहेंगे? नहीं। वैसी ही दान की बात है। जो दे दिया, निकाल दिया, उसकी ओर क्या झाँकना, उसका संदर्भ क्यों देना? किसी भी रूप में उसके उपयोग की चाह क्यों रखना? व्यक्ति जोड़कर रखता है, छोड़ना कठिन है। जोड़ने की क्रिया गरीब भी करता है, धनी भी करता है। मैं भिखारी की बात कह रहा था। साधन थोड़े हैं, हाथ बाहर हैं। एक तो यथार्थ में भिखारी होता है अर्थात् वह जिसके पास बाहर का खजाना नहीं होता। दूसरा वह, जिसके पास बाहरी खजाना अर्थात् धन संपदा बहुत है, परंतु अंदर का खजाना अर्थात् आत्मा का धन दोनों के पास बराबर होता है। जब तक भीतरी खजाने को नहीं पाया, दोनों ही भिखारी हैं। भीतरी खजाना अर्थात् आत्मा के खजाने से तो केवल पर्दा दूर करने की बात होती है। जिसके पास बाहरी खजाना नहीं, वह हाथ पसारता है। कवि आनंदघन जी प्रार्थना करते हैं। प्रार्थना भी एक याचना है, पर वह भी उचित नहीं है। जरा सोचें कि वे क्या देंगे जो सिद्ध हो गए हैं? उनकी चाहे कितनी भी स्तुति करो या निंदा करो, वे न तुष्ट होंगे न रूष्ट, वे सहज अवस्था में ही रहेंगे। चाहे अरिहंत की भी स्तुति करें, पर वे भी कुछ नहीं दे पाएँगे। वर्तमान में जो साधु हैं, उनकी स्तुति करो तो भी वे क्या दे पाएँगे? उनके पास धर्म-ध्यान है, पर वे क्या धर्म-ध्यान दे सकते हैं? वे अपनी सहज प्रवृत्ति से चलते हैं। लेने वाला उनसे प्रेरणा प्राप्त कर धर्म-ध्यान अपने ही प्रयासों से ले सकता है। यदि हमारी तैयारी नहीं है तो हम ले पाएँगे क्या? हमारी आत्मा के द्वार बंद हैं तो नहीं ले पाएँगे। द्वार खोलेंगे, तैयारी करेंगे तभी प्राप्त कर पाएँगे अन्यथा गंगा सामने

बहती रहेगी और हम प्यासे के प्यासे रह जाएँगे। साधु भी देते नहीं। वे पाने का तरीका बताते हैं। वे कहते हैं कि अभिलषित तुम्हारे भीतर ही है। उसे खोलो तो प्राप्त हो सकता है, खोलने का तरीका सीखो। इसकी भी एक तरकीब होती है। आजकल इस प्रकार के ताले भी होते हैं जिन्हें खोलने के लिए नंबर मिलाने पड़ते हैं। नंबर मिलेंगे तभी ताला खुल पाएगा। अंक न मिले तो चाहे जितनी देर चाबी घुमाओ, ताला नहीं खुलेगा। खोलने की बात तो बताई जा सकती है, परंतु खोलने का पुरुषार्थ तो स्वयं को करना होता है। वह भिखारी प्रतिदिन भीख माँगता था। माँगना उसका रोज का ही काम था। एक दिन उसने देखा कि उसके पास काफी पैसे इकट्ठे हो गए थे। आँखों की रोशनी तो कम थी, कानों से सुनाई भी कम देता था, पर इसके बावजूद भी हिसाब वह खूब लगा देता था। वह पहचान लेता था कि कौन-सा सिक्का पचास पैसे का है और कौन-सा एक रुपए का है। इस आधार पर वह गणित कर लेता था। उस दिन उसके कदम जल्दी-जल्दी बढ़ रहे थे। प्रसन्नता थी कि आज पैसे ज्यादा हैं, आमदनी ज्यादा हुई है। उसने सोचा कि पहले तो आमदनी में से कुछ बच जाता तो मैं माँ के पास भेजता था, माँ कितनी खुश होती थी। अब माँ नहीं रही फिर भी कुछ बच नहीं पाता। सोचा मैं रोज नमक से रोटी खाता हूँ, मुझे सब्जी भी नसीब नहीं हो पाती, आज इतने पैसे हैं तो अच्छा भोजन करूँगा। रोटी के साथ सब्जी भी बनाऊँगा। अपना गणित लगाता हुआ वह सहसा किराणे की दुकान की ओर बढ़ गया। उसका रोज का अभ्यास था, दिखाई न देने पर भी ठिकाने पर पहुँच गया। उसने ऑर्डर दिया— आटा-दाल दे दो, लेकिन ज्योंहीं जेब में हाथ डाला पैरों तले से जमीन खिसक गई। जेब कट गई थी। उसे बहुत दु:ख हुआ। उसे याद आया कि जब वह आ रहा था, मार्ग में किसी ने टक्कर ली थी। टक्कर लगाने वाले ने ही जेब साफ कर दी होगी। पैसा जाने का उसे दु:ख हुआ। यह दु:ख गरीब हो या अमीर, सभी को होता है।

दु:ख के परिमाण में अंतर हो सकता है। यद्यपि दु:ख तो सभी को होता है, चाहे भिखारी हो या धनवान। चाहे अपाहिज-लाचार हो, चाहे स्वयं जेब काटने वाला हो। कुछ लोग सभ्य तरीके से जेब काटने वाले होते हैं। कोई सीधा-सरल व्यक्ति यदि दुकान पर आ जाए तो उसके साथ ईमानदारी, अचौर्य, अपरिग्रह सिद्धांत का पालन नहीं होता। उचित कीमत से ज्यादा लेंगे, उसकी हजामत कर डालेंगे। भिखारी के तो जेब कटने पर विचार आया, लेकिन जिसकी हजामत की, उसकी क्या स्थिति बनेगी, उसे कितनी पीड़ा होगी! वह आपकी अनुभूति में नहीं आएगा। यदि स्वयं के साथ ऐसा हो जाए तो लंबे समय तक याद रखेंगे कि उसने मेरे साथ ऐसी वारदात की थी। ऐसी अवस्थाएँ जिस सीमा तक हमारे भीतर निर्मित होती हैं, उतनी ही सीमा तक हम श्रेयांसनाथ भगवान के मार्ग से दूर होते हैं। आध्यात्मिकता के विकास के लिए हम बाहर नहीं आँकें, अपने भीतर टटोलें। वह बाहर उपलब्ध नहीं होगी, वह हमारे भीतर ही मौजूद है। केवल बीच में पड़े पर्दे को हटाना है। पर्दा हटा तो हमें वह सौंदर्य प्राप्त हो सकता है। हमारी क्रियाएँ जितनी अपने राम में होती हैं, उतनी यदि प्रत्येक में हो जाए तो हम बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं। ऐसी समझ अथवा योग्यता सिर्फ किताबों के अध्ययन से ही प्राप्त नहीं होगी। जो किताबों से प्राप्त होती है, वह स्मृति तक रह जाती है। जब तक उस ज्ञान का अनुभव के साथ संयोग नहीं होगा, वह आपका नहीं बन पाएगा। वह परिग्रह रूप रह जाएगा। व्यक्ति उसे परिग्रह नहीं मानता, किंतु कहा गया है— **'णाणस्स फलं विरई'**, ज्ञान होने के बाद विरति होनी चाहिए। यदि वह पापाचार में लगा रहा तो वह ज्ञान पतन का कारण होगा।

प्रभु महावीर से प्रश्न किया गया—आत्मा किससे डूबती है, किससे तैरती है? प्रभु ने कहा—18 पापों से आत्मा डूबती है एवं 18 पापों के त्याग से आत्मा तैरती है। जब तक पापों से रहित नहीं, तैरने का अनुभव नहीं होगा, तैरने की अनुभूति नहीं ली तो वह मजा भी नहीं आएगा। एक व्यक्ति तैर रहा है, एक खड़ा देख रहा है। जब तक वह हाथ-पैर चलाकर नहीं तैरे, तब तक उसे तैरने की अनुभूति नहीं हो सकती। अनुभूति करने के

लिए उसे भी छलांग लगानी होगी। जैसे ही कूदकर तैरने की प्रक्रिया से जुड़ेगा उसे आनंदानुभूति होगी। कवि ने प्रार्थना की कड़ियों में कहा है—

निज स्वरूप जे किरिया साधे,
नेह अध्यात्म कहिये रे

अपने स्वरूप को साधने की क्रिया ही अध्यात्म है। यदि निज स्वरूप को नहीं साधा तो संकट आते ही व्यक्ति घबरा जाएगा। साधु जीवन में स्वरूप साधने की क्रिया नहीं की तो वह रीता ही रह जाएगा। अध्यात्म में प्रवेश के लिए निज स्वरूप को साधना होगा तभी अध्यात्म का रूप बनेगा। अत: हम पाँच महाव्रतों की बातें ही नहीं करें बल्कि उन्हें जीवन में उतार भी लें, तब वे हमारी प्रवृत्ति बन पाएँगे, जीवन के अणु-अणु में रम पाएँगे। कपड़े उतारे जा सकते हैं, पर अवयव रस आदि शरीर के साथ रहने वाले हैं, जुड़े हुए हैं। जैसे खून जो हमारी धमनियों में बह रहा होता है, उसमें अनेक तत्त्व मिले होते हैं। यदि कोई बीमारी हो जाए तो रक्त की जाँच की जाती है कि उसमें क्या कमी है या क्या विकार है? रक्त के अनेक तत्त्व परस्पर एकमेक हैं, उन्हें अलग करने में कठिनाई होती है। जैसे खून में ये तत्त्व एकमेक हैं, वैसे ही अहिंसा आदि तत्त्व हमारे जीवन व्यवहार में एकमेक हो जाएँ, ऐसी हमारी प्रवृत्ति बनें। यह नहीं कि कोई देख रहा है तो पालन करें, नहीं देखे तो झूठ बोल दें। उस स्थिति में सदाचार नहीं, मिथ्याचार होगा। कोई देख रहा है तो बीड़ी-सिगरेट नहीं पीएँ, पर नहीं देख रहा है तो एक कश ले लें। यह दंभ होगा। प्रभु महावीर की दृष्टि में ऐसी प्रति अध्यात्म नहीं है, बल्कि वह पापकर्म में लिप्त रखकर श्रेय मार्ग से दूर करने वाली है। ऐसी स्थिति में स्वरूप को साधने की बात ही दूर रह जाएगी। बातों से हटकर परमात्मा से नैकट्य स्थापित करेंगे तब ही अनुभव प्राप्ति की स्थिति बनेगी। यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि व्यक्ति जिसमें लीन होता है उसमें उसे असीम सौंदर्य के दर्शन होते हैं। परमात्मा से निकटता में उसकी छवि को देखने के बाद वह कहेगा—प्रभु आपसे बढ़कर और कोई सौंदर्यशाली नहीं। यह भक्ति का वास्तविक स्वरूप है।

अपनी नवविवाहिता पत्नी के सौंदर्य पर मुग्ध प्रेमी को अपनी प्रियतमा के शरीर में उत्पन्न फोड़े में भी सौंदर्य ही दिखाई देता हैं। इस प्रकार मुग्ध हुआ वह प्रेमी कालधर्म को प्राप्त कर उसी फोड़े में कीड़े के रूप में जन्म लेता है। पहले दूसरे देवलोकों के देव पृथ्वी, पानी, वनस्पति, आदि में आसक्त होकर देवलोक से निकलकर पृथ्वी, पानी, वनस्पति में उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार दिव्यलोक की रिद्धि से समृद्ध देवों का आसक्ति के कारण ही एकेंद्रिय रूपों में पतन होता है। व्यक्ति जिनमें लीन होता है उसी में सारा सौंदर्य दिखाई देता है। आपने भी यदि समकित से सगाई नहीं की तो वहाँ कुँवारापन ही रहेगा। समकित से सगाई कर ली फिर कोई बदलाने की कोशिश करे तो क्या उसे पतिव्रता कहेंगे? कहते हैं—**'त्रिया तेल, हमीर हठ, चढ़े न दूजी बार'**। स्त्री को तेल एक बार ही चढ़ता है। दूसरी बार विवाह होगा तो तेल नहीं चढ़ेगा, बिना तेल के ही पुनर्विवाह (नाता) होगा। उसी प्रकार जिसने सम्यक्त्व से संबंध स्थापित कर लिया, वह विपरीत अवस्था से नहीं जुड़ेगा। आज व्यक्ति समस्याओं में उलझा रहता है। यदि समस्याओं को सुलझाना है, उनके हल ढूँढ़ने है तो चिंता छोड़कर निरांत होकर कोशिश करें। स्वयं को हलका बनाएँ तो प्रत्येक समस्या का समाधान ढूँढ़ पाएँगे। आज हमारी समस्या यह है कि हम अहिंसा के सिद्धांत को जान तो रहे हैं, पर उसे व्यवहार में उतार नहीं पा रहे हैं। ये हमारी प्रति के साथ कैसे एकमेक बने? इस पर चिंतन करें। यदि इन सिद्धांतों को शरीर के अवयवों की राह में जीवन का अंग बना लें तो जीवन मंगलमन बन जाएगा। जीवन के ऐसे मंगलमय रूप की प्राप्ति हेतु ही तो संपूर्ण क्रियाएँ एवं अध्यवसाय होते हैं। अत: सांसारिकता का त्यागकर निज स्वरूप में रमण करते हुए तीर्थंकरों द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर हम चलें और इस जन्म को सफल बनाएँ।

साभार- श्री राम उवाच-4 (दो कदम सूर्योदय की ओर)

ज्ञान सार

आध्यात्मिक आरोग्यम्

-संकलित

गुणपरक दृष्टि

परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. का जन-जन के चिंतन हेतु अमूल्य आयाम **'आध्यात्मिक आरोग्यम्'** ब्यावर की पुण्यधरा पर ज्ञान पंचमी को प्रदान किया गया था। धारावाहिक के रूप में आप सभी के समक्ष आत्मकल्याण के लक्ष्य के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं। इसे जीवन में उतार कर अपने जीवन को आध्यात्मिक आरोग्यम् की ओर उन्मुख करें।

दृष्टि गुण की राखिए,
गुण धारिए दिल माय।
गुणपरक दृष्टि सुखद,
गुरु वाणी सुखदाय।।

बहुत ही संकोची, शर्मीला, डरपोक व्यक्ति गणधर भगवान के सान्निध्य में आता है तो भगवान उसे ज्ञान देते हैं। वह धीरे-धीरे याचना करता है। अटकता है। उत्साह गिरता है। भगवान फिर बढ़ाते हैं। फिर गिरता है। भगवान फिर बढ़ाते हैं। तत्त्वों में शंका आती है तो विषय भूल जाता है। उत्साह मंद पड़ने लगता है। गणधर भगवान उसका उत्साह फिर बढ़ाते हैं। उसकी त्रुटियों की जगह उसके गुणों को उभारते हैं। लगातार उत्साहवर्धन से वह एक महानवादी प्रवचनकार बन जाता है। यह गुणपरक दृष्टि की भेंट है।

गुणपरक दृष्टि होने पर भीतर एक नि:स्वार्थ प्रेम होता है। उस प्रेम की सहायता से हर कोई लाभान्वित होता है। मन में रहे हुए हीन विचार भाग जाते हैं। यह गुणपरक दृष्टि का प्रभाव है।

तीर्थंकर, केवली, गणधर, पूर्वधारी, मन:पर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, आहारक, लब्धिधारी, सर्वाक्षर-सन्निपाती, जिनकल्पी, स्थविरकल्पी, परिहार विशुद्धि के आराधक सभी के लिए एक गुण परम आवश्यक है। वह है गुणपरक दृष्टि। यूँ कह दें कि गुणपरक दृष्टि होगी तभी ये सारी लब्धियाँ प्राप्त हो सकेंगी।

गुणपरक दृष्टि से अनेक आत्माएँ तिर जाती हैं। शाल, महाशाल ने देशना सुनी और दोनों भाई संसार से संयम की ओर बढ़ गए। वे अपने भांजे और बहनोई को राज्य संभलाकर धर्म की सुंदर आराधना करते हुए विचरण करने लगे। दोनों भाई भगवान से आज्ञा प्राप्त करके गौतम स्वामी के साथ अपनी नगरी में जाते हैं। प्रजा अपने राजा को देखकर हर्षित होती है। वहाँ गौतम स्वामी की देशना सुनकर शाल, महाशाल के सांसारिक बहन, बहनोई और भांजे संयम ग्रहण करते हैं। मार्ग में शाल, महाशाल अपने बहन-बहनोई और

भांजे के बारे में विचार करते हैं कि ये लोग कितने अच्छे हैं कि इन्होंने हमारे दीक्षा लेने के मार्ग को सुगम बना दिया। हमें प्रपंचों से मुक्त कर दिया। अहोभावों से उनको नमस्कार करते हैं। मन से उनके सद्गुणों का विचार करते हैं। दूसरी तरफ बहन विचार करती है कि मेरे दोनों भाई कितने अच्छे हैं कि उन्होंने शादी के बाद भी पूरा राज्य हमें सौंप दिया। भांजा विचार करता है कि मामा कितने अच्छे हैं जो हमें राज्य भी दिया और संयम की प्रेरणा भी दी। बहनोई भी दोनों सालों के प्रति प्रशस्त विचार करते हैं। इस प्रकार पाँचों एक-दूसरे के प्रति गुणपरक दृष्टि रखते हैं। पाँचों के अध्यवसाय शुभ होते हैं, निर्मल बनते हैं। वर्धमान परिणाम के प्रभाव से पृष्ठचंपा के राजा शाल और महाशाल केवलज्ञानी बन जाते हैं। यह कहानी गुणपरक दृष्टि का अद्‌भुत उदाहरण है।

जगत में गुणपरक दृष्टि वाले लोग बहुत कम होते हैं। दूसरों के गुणों को देखना एवं उन्हें धारण करना बहुत कठिन है क्योंकि इसके लिए अपने अहंकार को मिटाकर अपने भीतर बहुमान पैदा करना होता है।

गुणपरक दृष्टि को हासिल करने, उसे बढ़ाने और सुरक्षित रखने के लिए कुछ उपाय करने होंगे। वे उपाय हैं –

1. गुणी जन सत्संग : गुणियों की संगत करेंगे तो हमारे भीतर गुणपरक दृष्टि बढ़ेगी। तपस्वी की संगत से तपस्या, ज्ञानी की संगत से ज्ञान, सेवाभावी की संगत से सेवा, मृदुभाषी की संगत से मृदुता, भक्त हृदयी की संगत से भक्ति की वृद्धि होती है। इससे स्पष्ट है कि जो जैसे गुणों का धारक है, उससे वैसे गुणों की वृद्धि होती है। जब हम गुणियों की संगत में रहेंगे तब अनचाहे ही हमारी नजर में गुण आएँगे। स्वाध्यायी मुनि के पास बैठने से उसका स्वाध्याय रूपी गुण दिखेगा ही। तपस्वी मुनि के पास बैठने पर उसकी तपस्या आँखों से ओझल नहीं हो सकती। मृदुभाषी मुनि की मीठी वाणी कानों में पड़ेगी ही। जैसे व्यक्ति आपके आस-पास होंगे आप अनचाहे ही वैसे बनने लगेंगे। इसलिए गुणपरक दृष्टि का विकास चाहते हो तो गुणी जनों की संगत करनी चाहिए।

2. वर्णवाद : भगवान ने श्री ठाणांग सूत्र में फरमाया कि वर्णवाद करने से सुलभबोधि की प्राप्ति होती है। यहाँ ध्यान रखना है कि कोई वर्णवाद तभी करेगा, जब गुणों को देखेगा। गुणों को देखे बिना वर्णवाद नहीं किया जा सकता। वर्णवाद करने से समकित निर्मल होती है। संघ के छोटे से छोटे सदस्य का गुणानुवाद करना वर्णवाद है। ऐसा करने से वह सदस्य आगे बढ़ेगा। उसके उत्साह में वृद्धि होगी। उसका आत्मविश्वास उसे धर्म से जोड़े रखेगा और एक जिनशासन भक्त संघ को प्राप्त होगा।

केवली भगवान सभी जीवों के गुण और अवगुण जानते हैं। उनसे कुछ छिपा हुआ नहीं है, परंतु वे जीवात्मा के गुणों का कथन करते हैं। हम भी संकल्प करें कि अधिक से अधिक वर्णवाद करेंगे। गलतियाँ किससे नहीं होती हैं? क्या हमसे गलतियाँ नहीं होती? कोई हमारी गलती बताएगा तो हमें कैसा लगेगा? जैसे हम अपने गुणों को सुनना चाहते हैं, वैसे ही हर जीव अपने गुणों को सुनना चाहता है। भगवान तो अजीव में भी गुणों की बात कर रहे हैं। भगवान नारकी जीव में भी गुण कथन कर रहे हैं। हमें देखना है कि हम क्या कर रहे हैं।

हमें वर्णवाद ही करना चाहिए। कहा भी गया है–

"गुण कहना गुण लिखना, गुण को ही फैलाना।
नाथ मेरे जीवन का, एक यही हो गाना।।"

वर्णवाद से सकारात्मक वातावरण का निर्माण होता है। इससे आपके चारों तरफ सकारात्मकता फैलती है। लोगों में आपकी सकारात्मक छवि बनती है। वैसे इन सबकी हमें आवश्यकता ही नहीं है। भगवान तो फरमाते हैं कि इससे दर्शन की विशुद्धि होती है। अरिहंत भगवान के गुणों को देखना, सिद्ध भगवान के गुणों को देखना, आचार्य भगवन् के गुणों को देखना, उपाध्याय प्रवर के गुणों को देखना, साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाओं के गुणों को देखना, चतुर्विध संघ के गुणों को देखना और

कहना हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। स्वाध्याय कम हो तो चलेगा, तपस्या कम हो तो भी चलेगा, दान कम हो तो भी चलेगा, पर गुणकथन में किसी प्रकार की कंजूसी नहीं करना।

3. सहायक भाव : सहायक भाव का गुण साधु-साध्वी एवं श्रावक-श्राविका सभी के लिए आवश्यक है। साधु और साध्वी के तल पर सहायक भाव यह होगा कि वे आपस में ज्ञान में सहयोग दें। अपने सहवर्ती के ज्ञानवर्धन में सहयोगी बनें। उससे भी महत्त्वपूर्ण है कि बिना स्वार्थ के अग्लान भाव से परस्पर सेवा में सहयोग करें। कोई नवदीक्षित ग्लान दशा में हो और उसके साथ आत्मीय व्यवहार होगा तब उसके पारिवारिकजन को जानकारी होने पर जिनशासन के प्रति उनका अहोभाव बढ़ता है। बुखार आदि में उनका ध्यान रखेंगे, मन लगाकर सेवा करते हैं तो परिजनों के मन में संघ, गुरु एवं जिनशासन के प्रति अहोभाव बढ़ता है। यह गुणपरक दृष्टि से ही संभव हो पाएगा।

श्रावक अपने श्रावकों को, संघ के सदस्यों को संभाले, आर्थिक सहयोग दे। कैसे दे, इस पर गुरुदेव श्री श्रीलाल जी म.सा. बीकानेर के श्रावक की बात कहते हैं कि वे किसी मध्यम किंवा परिस्थिति वाले भाई को देखते तो चुपके से उसे अलग बुलाकर कहते कि बच्चों को छाछ लेने भेजना। छाछ लेने आने पर छाछ वाले बर्तन में सिक्के डाल देते। ऐसी गुप्त सहायक वृत्ति सभी श्रावकों में पैदा हो। गुणपरक दृष्टि से परस्पर सहयोग की भावना पैदा होती है। हम गुरुदेव की प्रार्थना में गाते हैं- **'स्वधर्मी को सहयोग मिले।'** स्वधर्मी सहयोग तभी हो पाएगा, जब गुणपरक दृष्टि होगी। साधु-साध्वी नि:स्वार्थ भाव से ज्ञान-ध्यान व सेवा में परस्पर सहयोग करेंगे तथा श्रावक-श्राविका भी आपस में सहयोग की वृत्ति को बढ़ाएँगे। स्वधर्मियों का आर्थिक सहयोग बिना किसी नाम की अपेक्षा के करेंगे। कई स्वधर्मी बहुत मुश्किल से अपना जीवन यापन करते हैं, लेकिन स्वाभिमान के कारण वे किसी से कुछ माँगने की हिम्मत नहीं कर पाते। उन्हें डर रहता है कि मैं किसी से माँगूँगा तो मेरी इज्जत बाजार में आ जाएगी। वे अपना पेट काटकर बच्चों को पढ़ाते हैं। बहुत मुश्किल से घर का खर्चा चलाते हैं पर किसी के सामने हाथ नहीं फैलाते। पुराने श्रावकों के बारे में सुनते थे कि वे इस हाथ से दान देते थे तो उस हाथ को मालूम नहीं पड़ता था। आप देखें कि क्या कोई माँ अपने पुत्र की सेवा करने पर किसी से कहती है कि मैंने सेवा की। नहीं कहती। उसकी सेवा गुप्त होती है। वैसे ही हम भी संघ सेवा, स्वधर्मी सेवा गुप्त तरीके से करें। इससे हम वास्तव में जिनशासन के सच्चे सेवक बन पाएँगे।

4. अहोभाव : गुणपरक दृष्टि से अहोभाव पैदा होता है। अहोभाव से वर्णवाद हुए बिना नहीं रहता। अहोभाव अतिविशिष्ट गुण है, जो गुणपरक दृष्टि का ही फल है। अहोभाव के बिना सहायक भाव नहीं हो पाएगा और सहायक भाव के बिना समूह भाव (टीम वर्क) नहीं हो पाएगा। संघ का कार्य टीम वर्क है। हम सभी जानते हैं कि टीम में हर एक का अपना महत्त्व होता है। सूई की जगह सूई और तलवार की जगह तलवार काम आती है। सूई को फेंक देने या तलवार को तोड़ डालने से टीम वर्क नहीं हो पाएगा। संघ में ज्ञानवान, धनवान, तपस्वी, सेवाभावी, वक्ता, पुरुषार्थी, बालक, युवक, बुजुर्ग, श्राविका, साध्वी, साधु सबकी आवश्यकता है। आप किसी को भी नजरअंदाज नहीं कर पाओगे। इन सबको एक सूत्र में पिरोने की क्षमता अहोभाव में है। अहोभाव के धागे से संघ के सभी मोती पिरोए जा सकते हैं। अहोभाव से गुणपरक दृष्टि प्राप्त होती है।

अहोभाव, बहुमान, भक्ति एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। ऐसा भी कह सकते हैं कि ये एक ही हैं। गुणपरक दृष्टि हमें बहुत व्यापक दृष्टिकोण देती है। हम गुण पूजक हैं, व्यक्ति पूजक या जड़ पूजक नहीं। हमारे महामंत्र में किसी व्यक्ति का नाम नहीं है। उसमें गुणियों का नाम है। मेरी भावना में हम कहते हैं –

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।

गुणियों के प्रति अहोभाव, वर्णवाद, सहायक भाव होना चाहिए, चाहे किसी भी देश-संप्रदाय का हो। **'नमो लोए सव्वसाहूणं'** में किस संप्रदाय के साधु का नाम है? **'नमो सिद्धाणं'** में किस संप्रदाय के सिद्धों का नाम है? वहाँ तो अन्य लिंग सिद्ध और गृहस्थ लिंग सिद्ध भी कहा है। अर्थात् गुणियों को नमस्कार किया गया है। किसी एक सीमा में नहीं बाँधा गया है। जो गुणी हैं, उन्हें नमस्कार करने की बात कही गई है।

गुणपरक दृष्टि को आचार्यश्री के ही शब्दों में कहे तो गुरुदेव ने गुणोत्कीर्तन वर्ष में कहा था कि हर श्रावक-श्राविका गुण कीर्तन, गुण संरक्षण और गुण संवर्धन से जुड़े। इसमें गुण संरक्षण और गुण संवर्धन बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। बबूल के पेड़ की रक्षा नहीं की जाती। वह तो ऐसे ही बढ़ता चला जाता है। आम और गुलाब की रक्षा की जाती है। गाजर घास को उगाने के लिए कहाँ मेहनत की जाती है, परंतु गन्ने की फसल कमरतोड़ मेहनत माँगती है। सद्गुणों का ही संरक्षण आवश्यक है, दुर्गुणों से तो हम भरे हुए हैं ही।

एक राजा ने तीर्थयात्रा पर जाने का विचार किया। तीर्थयात्रा पर जाने से पूर्व उसके मन में उत्तराधिकारी के चयन की अभिलाषा थी। उसने अपने पुत्रों को बुलाकर गुलाब के कुछ बीज उनके हाथों में देते हुए कहा कि मैं तीर्थयात्रा से लौटकर आऊँगा तब तुमसे ये बीज माँगूँगा। राजा तीर्थयात्रा पर निकल पड़ा। राजा के जाने के बाद पुत्र अपने-अपने कामों में लग गए। उधर राजा मन लगाकर तीर्थयात्रा कर रहा था। एक साल तक वह घूमता रहा। एक साल बाद वह अपने नगर में पहुँचा, तब पूरा नगर सजाया गया। राज्य के अनेक लोग उसके स्वागत के लिए राजधानी में आए हुए थे। राजा बड़ा खुश था। राजा ने दुल्हन-सी सजी हुई अपनी राजधानी का भ्रमण किया। जुलूस निकला और ढोल-नगाड़ों के साथ राजदरबार पहुँचा। राजदरबार में अनेक मित्र राजा, अधीनस्थ राजा, राव, उमराव, सेनापति, सेठ आए हुए थे। आए हुए सभी लोग अपनी तरफ से कुछ न कुछ उपहार राजा के लिए लाए थे। राजा उन उपहारों को खुशी-खुशी ग्रहण कर रहा था और अपनी ओर से भी दे रहा था। एक भव्य महोत्सव राज्य में मनाया गया। सबने स्वागत अभिभाषण दिया। राजा ने भी अपना वक्तव्य दिया।

सब कुछ हो जाने पर राजा ने अपने पुत्रों को बुलाया और कहा कि तीर्थयात्रा पर जाने से पहले मैंने तुम्हें कुछ बीज दिए थे, वे कहाँ हैं? एक पुत्र के अतिरिक्त अन्य पुत्र उन बीजों को भूल ही गए थे। पूछने पर एक पुत्र को याद आया और वह बीज लेने दौड़ा। उसने अपने संदूक में बीजों को सँभालकर रखा था। उसने बीज निकालकर देखा तो वे सड़ चुके थे। एक पुत्र ने कहा कि मैंने उन्हें खेत में बोया है चलिए देखने। राजा अपने रथ पर बैठकर उस खेत तक पहुँचा तो वहाँ पत्थर पड़े थे और घास उगी थी। वहाँ काँटे बिखरे थे और पशु बैठे थे।

जो पुत्र बीजों को याद किए था, उसके चेहरे पर आभा थी। अपनी चमकदार आँखों से पिता की ओर देखकर वह कहता है, पिताजी! चलिए मैं आपको वह बीज दिखाता हूँ। पिताजी उसके चेहरे को देखकर आश्वस्त हुए और अपने ही रथ पर बैठाकर उसे ले चले।

एक घाटी के पास पहुँचकर पुत्र ने कहा, अब आप रथ छोड़ दें, कुछ दूर पैदल चलना होगा। राजा रथ छोड़कर पैदल चलने लगा। राजा जैसे-जैसे आगे बढ़ा, वैसे-वैसे वातावरण की फिज़ाँ बदलने लगी। खुशबू आने लगी। ठंडी-ठंडी लहरों और गुलाब की गंध उसके नासापुट में भरने लगी। जहाँ तक उसकी नजर जा रही थी पूरी जमीन गुलाबी दिख रही थी। खिले हुए झूमते फूल राजा के मन को मोहित करने लगे। यह दृश्य देखकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने अपने पुत्र को गले से लगा लिया और उसके साथ राजदरबार पहुँचा। अगले दिन उस पुत्र की ताजपोशी कर दी।

राजा ने अपने अन्य पुत्रों से पूछा कि तुमने क्या किया था तब किसी ने कहा कि हम तो भूल गए, हमें याद ही नहीं है। एक पुत्र ने कहा कि मैंने तो पेटी में सँभाल के रख दिया था। एक ने कहा, मैंने तो जमीन में बो दिया था, पर बोने के बाद मेरा ध्यान ही नहीं गया। विजेता पुत्र ने कहा कि पिताजी, आपके जाने के बाद मैंने राजधानी के श्रेष्ठ माली को बुलाया और उससे पूछा कि इन बीजों का क्या किया जाए, जिससे सम्राट खुश हो जाएँ। उस माली ने उन बीजों को लिया और जमीन का चयन किया। फिर उस जमीन से काँटों व पत्थरों को हटाकर हल चलाया और उन्हें बो दिया। उनके लिए खाद-पानी की व्यवस्था की। उन्हें पक्षियों व जानवरों से बचाया तो पौधे लहलहा उठे। फिर कलियाँ फूटी, फूल खिले और और धीरे-धीरे एक बगीचा नाचने लगा।

गुरुदेव कहते हैं गुण-संरक्षण और गुण-संवर्धन करने के लिए। गुणों की रक्षा और संवर्धन दोनों जरूरी है। आपके जीवन में कोई गुण है तो उसकी रक्षा करें। साथ ही यह चिंतन करते रहें कि उस गुण को कैसे बढ़ाया जाए! बार-बार गुरु-सान्निध्य, अहोभाव की खाद डालकर उन बीजों को बढ़ाते चलें। ऐसा करने से जीवन एक दिन गुण रूपी फूलों का बगीचा बनकर नाचने लगेगा। जब हम गुणों का चिंतन करेंगे, उनका कीर्तन करेंगे तो हमारे भीतर स्वतः गुण-संरक्षण और गुण-संवर्धन होने लगेगा।

पहला बिंदु गुणपरक दृष्टि पूरा हो चुका है। थोड़ा रुकिए... इस पर सोचिए... हम आपको ऐसे आगे नहीं बढ़ने देंगे।

रुकें, वादा करें अपने आप से कि इन बिंदुओं को कम से कम 21 दिनों तक अपने जीवनशैली का हिस्सा बनाने की कोशिश करेंगे। वादा करें अपने आप से कि आप अगले 21 दिन तक ये करेंगे। 21 दिन तक इसलिए क्योंकि मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि कोई भी क्रिया यदि 21 दिन तक लगातार की जाती है तो वह आदत बन जाती है। आप इसे अपने जीवन का हिस्सा बनाएँ।

सप्ताह में एक बार पति/पत्नी/बच्चे/कर्मचारी की तारीफ करें। कहें कि

1. *आप मुझे अच्छे लगते हैं।*
2. *कहें कि आपने फलाँ काम बहुत अच्छा किया।*
3. *आप आज बहुत सुंदर लग रहे हैं।*
4. *आपके कारण ही ये हो पाया है।*
5. *किसी से काम लेने के बाद उसे थैंक यू कहें।*
6. *देवानुप्रिय / भाग्यशाली / पुण्यवान / आयुष्मान जैसे शब्दों के प्रयोग से दिन की शुरुआत करें।*
7. *सबसे 'जय जिनेंद्र' कहें।*

भक्ति रस

क्यों नया साल मनाएँ

- संजय श्रीश्रीमाल, कोयंबटूर

न संस्कृति और सभ्यता है भारत की,
न मौसम और प्रकृति में बदलाव आता है।
फिर क्यों नया साल मनाएँ एक जनवरी से...?
न जयंती है किसी महापुरुष की,
न त्याग-तपस्या की भावना है।
फिर क्यों नया साल मनाएँ एक जनवरी से...?
आधी रात को शोरगुल से शुभारंभ हो जिसमें,
कंद-मूल और रात्रिभोजन का सेवन हो जहाँ।
फिर क्यों नया साल मनाएँ एक जनवरी से...?
नाच-गान और स्वच्छंदता का राग-रंग हो जिसमें,
आठ कर्मों का बंधन हो जिसके आयोजन में।
फिर क्यों नया साल मनाएँ एक जनवरी से...?

ज्ञान सार

श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला

15-16 नवंबर 2024 अंक से आगे...

संकलनकर्ता – कंचन कांकरिया, कोलकाता

प्रश्न 128 क्या विद्याचारण मुनि आदि 2 ½ द्वीप के बाहर जाएँ तो वहाँ उनकी अशुचि में सम्मूर्च्छिम मनुष्य उत्पन्न होते हैं?

उत्तर क्षेत्र प्रभाव से वहाँ सम्मूर्च्छिम मनुष्यों की उत्पत्ति नहीं होती तथा लोकस्वभाव के कारण 2 ½ द्वीप के बाहर जाने के कुछ समय पूर्व शरीर में रही अशुचि की योनि विध्वस्त हो जाती है।

प्रश्न 129 सम्मूर्च्छिम मनुष्य कैसे होते हैं?

उत्तर सम्मूर्च्छिम मनुष्यों की अवगाहना अंगुल के असंख्येयतम भाग मात्र की होती है। ये असंज्ञी, मिथ्यादृष्टि एवं अपर्याप्त होते हैं। ये अंतर्मुहूर्त (लगभग एक सेकेंड के 23वें हिस्से प्रमाण) की आयु भोगकर काल कर जाते हैं।

प्रश्न 130 एक सेकेंड के 23वें हिस्से को गणित से स्पष्ट कीजिए।

उत्तर सम्मूर्च्छिम मनुष्य की आयु एक क्षुल्लक भव/256 आवलिका जितनी होती है।

1 मुहूर्त में 1,67,77,216 आवलिकाएँ होती हैं।

1 मुहूर्त में 48 मिनट × 60 सेकेंड = 2880 सेकेंड होते हैं।

1,67,77,216 ÷ 2880 = 5825.42 आवलिकाएँ एक सेकेंड में होती हैं।

इस प्रकार 256 आवलिका में लगभग एक सेकेंड का 23वाँ हिस्सा होता है।

प्रश्न 131 गर्भज मनुष्य कितने प्रकार के हैं?

उत्तर गर्भज मनुष्य 3 प्रकार के होते हैं। यथा– (1) कर्मभूमिज, (2) अकर्मभूमिज और (3) अंतर्द्वीपज। 101 क्षेत्रों के आधार से मनुष्यों का वर्गीकरण किया गया है। यथा– 15 कर्मभूमिज, 30 अकर्मभूमिज और 56 अंतर्द्वीपज। ये पर्याप्तक और अपर्याप्तक होते हैं। अतः 101 पर्याप्त + 101 अपर्याप्त + 101 सम्मूर्च्छिम (अपर्याप्त ही होते हैं), कुल 303 प्रकार के मनुष्य हैं।

प्रश्न 132 कर्मभूमि आदि किसे कहते हैं?

उत्तर (1) जहाँ कृषि, वाणिज्य आदि जीवन निर्वाह के कार्य होते हैं एवं मोक्ष की आराधना होती है, उसे कर्मभूमि कहते हैं।

(2) जहाँ उपरोक्त कार्य नहीं होते, उसे अकर्मभूमि कहते हैं। अकर्मभूमि के युगलिक मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति 10 प्रकार के वृक्षों से हो जाती है।

(3) लवण समुद्र के अंतर् (अंदर) जो द्वीप है, वहाँ के युगलिक मनुष्य अंतर्द्वीपज कहलाते हैं। (यहाँ अंतर् शब्द मध्य का वाचक है)।

प्रश्न 133 अंतर्द्वीपज मनुष्य कितने प्रकार के हैं?

उत्तर अंतर्द्वीपज मनुष्य 28 प्रकार के हैं – (1) एकोरुक, (2) आभासिक, (3) वैषाणिक, (4) नांगोलिक, (5) हयकर्ण, (6) गजकर्ण, (7) गोकर्ण, (8) शष्कुलिकर्ण, (9) आदर्शमुख, (10) मेंडमुख, (11) अयोमुख, (12) गोमुख, (13) अश्वमुख, (14) हस्तिमुख, (15) सिंहमुख, (16) व्याघ्रमुख, (17) अश्वकर्ण, (18) सिंहकर्ण (हरिकर्ण), (19) अकर्ण, (20) कर्ण प्रावरण, (21) उल्कामुख, (22) मेघमुख, (23) विद्युन्मुख, (24) विद्युदंत, (25) धनदंत, (26) लष्टदंत, (27) गूढ़दंत, (28) शुद्धदंत।

नोट – ये 28 लवण समुद्र की दक्षिण दिशा में हैं और 28 उत्तर दिशा में हैं। कुल 56 अंतर्द्वीप हैं।

प्रश्न 134 क्या एकोरुक आदि द्वीपों के मनुष्यों का रूप अपने नाम के अनुरूप है?

उत्तर नहीं। किसी चित्रकार ने एकोरुक द्वीप के मनुष्य का चित्र एक जंघा वाला मनुष्य और अश्वमुख द्वीप के मनुष्य का चित्र घोड़े के समान मुख वाला बना दिया है। यह गलत है क्योंकि नाम के अनुसार अर्थ नहीं करना चाहिए। श्री जीवाजीवाभिगम सूत्र तृतीय प्रतिपति में 56 अंतर्द्वीपों के युगलिक स्त्री और पुरुष के नख से मुख तक (संपूर्ण शरीर) की सुंदरता का वर्णन किया गया है। एकोरुक आदि द्वीपों में रहने के कारण वहाँ के युगलिक मनुष्यों को भी एकोरुक आदि कहा गया है। जैसे– मारवाड़ में रहने वालों को मारवाड़ी कहते हैं।

प्रश्न 135 अंतर्द्वीपों के मनुष्यों की सुंदरता का वर्णन संक्षेप में कीजिए।

उत्तर ये वज्रऋषभनाराच संहनन एवं समचतुरस्र संस्थान वाले होते हैं। इन मनुष्यों के पैर सुंदर बनावट वाले होते हैं यावत् मुखमंडल शरदऋतु के चंद्रमा के समान होता है। ये उत्तम 32 लक्षणों से युक्त होते हैं। स्त्रियों के भी सभी अंग सुंदर होते हैं। इनका शृंगार भव्य और वेश सुशोभन होता है। अप्सराओं के समान ये स्त्रियाँ स्वभाव से ही हास्य, विलास एवं विषय में परम निपुण होती हैं। यहाँ के मनुष्य जन्म से ही सुगंधमय शरीर वाले, अत्यंत मंद क्रोध, मान, माया, लोभ वाले तथा मृदुता व ऋजुता से संपन्न होते हैं।

नोट – गुणों से व्यक्ति के सौंदर्य में शत गुणा वृद्धि हो जाती है।

प्रश्न 136 अकर्मभूमिज मनुष्य कितने प्रकार के हैं?

उत्तर अकर्मभूमिज मनुष्य 30 प्रकार के हैं। यथा – 5 हैमवत, 5 हैरण्यवत, 5 हरिवर्ष, 5 रम्यकवर्ष, 5 देवकुरु और 5 उत्तरकुरु, ये 30 अकर्मभूमिज क्षेत्र हैं। इनके भेद से मनुष्य भी 30 प्रकार के कहे गए हैं।

प्रश्न 137 अकर्मभूमिज मनुष्यों की अवगाहना आदि का वर्णन कीजिए।

उत्तर

नाम	अवगाहना	आयुष्य	आहार	संतान का पालन
(1) हैमवत, हैरण्यवत	1 गाऊ	1 पल्योपम	एक दिन छोड़कर	79 दिन
(2) हरिवर्ष, रम्यकवर्ष	2 गाऊ	2 पल्योपम	दो दिन छोड़कर	64 दिन
(3) देवकुरु, उत्तरकुरु	3 गाऊ	3 पल्योपम	तीन दिन छोड़कर	49 दिन

नोट – इनकी जघन्य स्थिति उत्कृष्ट स्थिति से पल के असंख्येयतम भाग कम होती हैं।

साभार- श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला

-क्रमशः

ज्ञान सार

श्रीमद् उत्तराध्ययनसूत्र

द्वादश अध्ययन : हरिएसिज्जं

15-16 नवंबर 2024 अंक से आगे....

संकलनकर्ता - सरिता बैंगानी, कोलकाता

पूर्व चित्रण

जब ब्राह्मणों ने हरिकेशबल मुनि का तिरस्कार किया और उन्हें आहार दान देने का निषेध किया, तब उन पर अनुकंपा भाव रखने वाला तिंदुक यक्ष उनका सेवक बन गया था। उसने मुनि के शरीर में प्रविष्ट होकर मुनि के लिए भिक्षा को पुण्य क्षेत्र बताकर भिक्षा के लिए याचना की। तब रुद्रदेव ब्राह्मण ने ब्राह्मण परंपरा द्वारा पुण्य-पाप क्षेत्र का स्पष्टीकरण किया।

तिंदुक यक्ष द्वारा पुण्य-पाप का स्पष्टीकरण

''दान का पात्र तो एकमात्र ब्राह्मण जाति ही है।'' ऐसे भाव रूद्रदेव ब्राह्मण ने जब व्यक्त किया तब मुनि में प्रविष्ट यक्ष ने फिर कहा -

कोहो य माणो य वहो य जेसिं, मोसं अदत्तं च परिग्गहं च।
ते माहणा जाइविज्जाविहूणा, ताइं तु खेत्ताइं सुपावयाइं।।14।।

भावार्थ - ''हे ब्राह्मणो! जिसमें क्रोध एवं अभिमान है, वध एवं मृषावाद है, अदत्त सेवन एवं परिग्रह है, वे महात्मा जाति और विद्या से विहीन मानने योग्य हैं अर्थात् पाप क्षेत्र हैं।''

जाइविज्जाविहूणा - जाति और वेद विद्या से कोसों दूर हैं।

सुपावयाइं - हिंसात्मक या अप्रीतिकारक। इसलिए इसका अनुवाद 'पाप' किया है।

तुब्भेऽत्थ भो! भारहरा गिराणं, अट्ठं न जाणेह अहिज्ज वेए।
उच्चावयाइं मुणिणो चरंति, ताइं तु खेत्ताइं सुपेसलाइं।।15।।

भावार्थ - ''आप इस लोक में केवल वेद वाणी का भार वहन कर रहे हो। वेदों को पढ़कर भी उनके वास्तविक अर्थ को नहीं जानते। जो मुनि उच्च-नीच-मध्यम घरों में समभावपूर्वक भिक्षाचर्या करते हैं, वे मुनिराज ही वास्तव में उत्तम हैं अर्थात् पुण्य क्षेत्र हैं।''

उच्चावयाइं के तीन अर्थ हैं - (1) मुनि उच्च, नीच, मध्यम घरों में भिक्षा के लिए भ्रमण करते हैं, (2) नाना प्रकार के तप से युक्त होते हैं तथा (3) उच्च व्रतधारी यानी महाव्रतों का आचरण करने वाले होते हैं।

सुपेसलाइं - श्रेष्ठ या प्रीतिकारक। इसलिए इसका अनुवाद 'पुण्य' किया है।

इन दो गाथा में यक्ष ने पुण्य-पाप रूप जाति को उनकी क्रिया से समझाने का प्रयास किया है।

इस गाथा का आशय है – अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह, इन पाँच महाव्रतों का संपूर्ण पालन करने वाले तात्त्विक बोध रूपी आगमज्ञाता मुनि, जो शास्त्रों के छिपे हुए अर्थ को जानते हैं, भिक्षाचर्या आदि 12 प्रकार के छोटे-बड़े तप से युक्त होकर ग्रामानुग्राम विचरण करते हैं। ऐसे मुनिराज के लिए दी गई अशनपानादिक सामग्री निश्चय ही पुण्यजनक हुआ करती है।

ब्राह्मण छात्रों द्वारा प्रतिवाद (प्रतिक्रिया)

यक्ष के इस प्रकार के कथन को सुनकर उन ब्राह्मणों के शिष्यों ने पुनः जो कहा, वह भगवान महावीर स्वामी ने इस प्रकार फरमाया है –

अज्झावयाणं पडिकूलभासी, पभाससे किण्णु सगासि अम्हं।
अवि एयं विणस्सउ अण्णपाणं, न य णं दाहामु तुमं नियंठा!।।16।।

भावार्थ – ''अरे निर्ग्रंथ! तुम हमारे अध्यापकों के प्रतिकूल, विरोधी भाषा बोल रहे हो। तुम हमारे समक्ष क्यों बोल रहे हो? हमने यह निश्चय किया है कि चाहे हमारा अन्न-पान सड़कर नष्ट हो जाए, किंतु तुम्हें नहीं देंगे।''

नियंठा – निर्ग्रंथ। सभी प्रकार की ग्रंथी-बंधनों से मुक्त। प्राचीनकाल में मुनि को 'निर्ग्रंथ' से संबोधित किया जाता था। इस पद से हरिकेशबल मुनिराज की अपरिग्रहिता सूचित की गई है, किंतु ब्राह्मण जन में तो विशिष्ट ज्ञान के साथ विशिष्ट धन वाले को ही आचार्य मानते हैं।

मुनि में प्रविष्ट यक्ष ने पुनः ब्राह्मणों को समझाने का प्रयास किया, वह इस प्रकार है –

यक्ष द्वारा पुनः मुनि को एषणीय आहार दान की प्रेरणा

समिईहिं मज्झं सुसमाहियस्स, गुत्तीहि गुत्तस्स जिइंदियस्स।
जइ मे न दाहित्थ अहेसणिज्जं, किमज्ज जण्णाण लहित्थ लाहं?।।17।।

भावार्थ – ''हे ब्राह्मणो! मैं पाँच समिति से समाधियुक्त तथा तीन गुप्तियों से गुप्त और जितेंद्रिय हूँ। इस निर्दोष आहार को मुझे नहीं देने से क्या आपको इन यज्ञों का लाभ प्राप्त होगा?''

लहित्थ लाहं – विशिष्ट पुण्य-प्राप्ति रूप लाभ।

इस गाथा का आशय है – निर्ग्रंथ साधु विशुद्ध एषणा द्वारा निर्दोष अन्न-पान आदि ग्रहण करते हैं, वे दान के 'सु-पात्र' होते हैं। ''ऐसे सद्गुणी सुपात्र भिक्षु को घर आने पर श्रद्धापूर्वक आहार का दान देकर लाभ को प्राप्त करने से वंचित मत रहो, किंतु तुम अभी यज्ञ कर रहे हो और ऐसे सुपात्र साधु को अभी दान नहीं दे रहे हो तो इससे तुम यज्ञ का लाभ पा सकोगे? क्योंकि पात्र को छोड़कर अपात्र को दिया गया दान, दान लेने वाले और दानदाता, दोनों को ही हानि प्राप्त कराता है।''

अध्यापकों की प्रेरणा पर छात्रों का मुनि पर प्रहार तथा राजपुत्री भद्रा द्वारा कुमारों को रोकने की शिक्षा

यक्ष के वचनों को सुनकर क्रोधवश वहाँ के प्रधान रुद्रदेव अध्यापक ने अपने विद्यार्थियों को मुनिराज को डंडे आदि से पीटकर एवं कंठ पकड़कर यज्ञ मंडप से बाहर निकालने का आदेश दिया। बहुत से कुमार (छात्रादि)

दौड़कर हरिकेशबल ऋषि को डंडों, चाबुकों और बेंतों से पीटने लगे। तभी उसी समय कौशल राजा की सुंदर पुत्री भद्रा अपने पति रुद्रदेव पुरोहित द्वारा आयोजित यज्ञ मंडप में पहुँची, उसने मुनि को पहचानकर ब्राह्मण कुमारों को शांत करने हेतु मुनि के उत्तमोत्तम गुणों तथा महाप्रभाव का दर्शन कराने का प्रयास करते हुए इस प्रकार कहा –

एसो हु सो उग्गतवो महप्पा, जिइंदिओ संजओ बंभयारी।
जो मे तया नेच्छइ दिज्जमाणिं, पिउणा सयं कोसलिएण रण्णा।।22।।

भावार्थ – "हे ब्राह्मणो! ये वही उग्रतपस्वी, महात्मा, जितेंद्रिय, संयमी और ब्रह्मचारी हैं, जिन्होंने मुझे, मेरे पिता राजा कौशलिक द्वारा दिए जाने पर भी स्वीकार नहीं किया था। जैसे वमन का परित्याग करते हैं, वैसे ही मेरा परित्याग कर दिया।"

उग्गतवो – उग्र तपस्वी। जो एक, दो, तीन, चार, पाँच पक्ष अथवा मास आदि उपवास में से किसी एक उपवास से शुरु करके जीवनपर्यंत उसका निर्वाह करते हैं।

जब कुमारों के प्रहार नहीं रुके, तब भद्रा ने चेतावनी के स्वर में पुनः कहा –

महाजसो एस महाणुभागो, घोरव्वओ घोरपरक्कमो य।
मा एयं हीलेह अहीलणिज्जं, मा सव्वे तेएण भे निद्दहेज्जा।।23।।

भावार्थ – "ये ऋषि महान यशस्वी, महान अनुभाग (अचिंत्य शक्ति) से संपन्न हैं। घोर व्रती हैं। घोर पराक्रमी हैं। ये कोई साधारण व्यक्ति नहीं हैं। अतः इन ऋषिवर की अवहेलना (अपमान) मत करो। ऐसा न हो कि ये अपने तप तेज से आप सबको भस्म कर दें।"

– क्रमशः

"

एक भिक्षु 12 वर्ष तक एक सेठ के घर भिक्षा के लिए घूमता रहा, पर किसी ने कुछ देना तो दूर रहा एक शब्द भी नहीं कहा। एक दिन सेठानी ने कह ही दिया – "क्यों आता है रोज–रोज? मैं कुछ नहीं देती।" भिक्षु तो मारे प्रसन्नता के झूमने लगा। वह घर से बाहर निकल रहा था इतने में सेठजी आ गए। सेठजी भी मक्खीचूस थे। रोटी लूखी खा लेते पर घी तिजोरी में ही रखा जाता। देखा कि भिक्षु प्रसन्न है। पूछा – "क्या बात है, बहुत खुश हो?" उत्तर मिला – "अरे, मुझे तो आज भीख मिल गई।" सेठजी दौड़े घर के भीतर। पूछा – "सेठानी! तुमने ये क्या किया? एक को दोगी तो भीड़ लग जाएगी।" सेठानी ने कहा – "अरे बाबा, मैंने तो कुछ दिया ही नहीं।" सेठ ने कहा – "तो क्या वह झूठ बोल रहा था?" खैर, पहुँचे उस भिखारी के पास। तुम साधु होकर झूठ बोलते हो, तुम्हें तो सेठानी ने कुछ दिया ही नहीं। भिक्षु ने कहा – "हाँ–हाँ, उसने मुझे दिया है।" 'हुंकारा' नहीं तो 'नकारा' ही सही। आज नकारा तो दिया है, आज के पूर्व तक बोलती भी नहीं थी। अब कभी 'हुंकारा' भी देगी। इसीलिए मैं खुश हूँ।

– परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

भावी प्रवर्तिनी के दर्शन

संस्कार सौरभ

धर्ममूर्ति आनंद कुमारी

15-16 नवंबर 2024 अंक से आगे...

(आप सभी के समक्ष 'धर्ममूर्ति आनंद कुमारी' धारावाहिक के रूप में प्रकाशित हो रहा है, जिसमें आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. की प्रथम शिष्या महासती श्री रंगू जी म.सा. की पट्टधर महासती श्री आनंद कँवर जी म.सा. का प्रेरक जीवन-चारित्र प्रतिमाह पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है।)

महासती श्री केशर कुमारी जी म.सा. अत्यंत अशक्त थीं और उनके पैर व कमर में दर्द रहता था, फिर भी आनंद कुमारी जी जैसी साहसिन मंत्राणी का सहयोग पाकर वे नवयुवती की तरह चलने को तैयार हो गईं। ब्यावर अभी दूर था। अजमेर से ब्यावर के मार्ग में छोटे-छोटे ग्रामों में भी आप अहिंसा और सत्य का प्रचार करती चली आ रही थीं। आपका ब्यावर आगमन सुनकर वहाँ के लोगों का मन हर्ष से उछलने लगा। ब्यावर से कई लोग आपके स्वागतार्थ कुछ पहले पहुँचे। लोगों के आने-जाने का ताँता लगा रहता था। विदुषी महासती श्री श्रेयः कुमारी जी ने कई साध्वियों को आपकी अगवानी हेतु भेजा। साध्वीवर्याएँ सकुशल ब्यावर पधार गईं। साध्वी श्री श्रेयः कुमारी जी ने श्री आनंद कुमारी जी म.सा. आदि सभी साध्वियों से बड़ी प्रसन्नता से बातचीत की। आपकी मान-मर्यादा का बड़ा खयाल रखा।

शांतमूर्ति साध्वी श्री श्रेयः कुमारी जी पर वृद्धता ने काफी प्रभाव डाल दिया था। आप शारीरिक कमजोरी के कारण ब्यावर में स्थिरवास कर रही थीं। आपकी शास्त्र धारणा शक्ति बड़ी विलक्षण थी। साथ ही आचार-विचार भी बड़े पवित्र थे। प्रवर्तिनी रत्न कुमारी जी ने आपको ही भावी प्रवर्तिनी बनाने का निर्णय किया था और आप सब तरह से योग्य थीं। साध्वी श्री आनंद कुमारी जी को प्रवर्तिनी श्री रत्न कुमारी जी का आशीर्वाद मिल चुका था। आपको अपनी वैराग्यावस्था में ही उनके हृदय के पवित्र उद्गार प्राप्त हुए थे। साध्वी श्री श्रेयः कुमारी जी को प्रवर्तिनी पद दिया गया। आप सहनशीला और निडर साध्वी थीं। ब्यावर की जनता आपके प्रवचनों एवं शुद्ध आचरण से बहुत ही संतुष्ट थी।

साध्वी श्री आनंद कुमारी जी म.सा. आदि साध्वीवर्याओं ने प्रवर्तिनी श्रेयः कुमारी जी म.सा. के दर्शन किए। आपकी भी साध्वी श्री आनंद कुमारी जी पर विशेष कृपादृष्टि थी। साध्वी श्री आनंद कुमारी जी ने थोड़े ही दिनों में प्रवर्तिनी म.सा. के हृदय में अपना स्थान बना लिया था।

साधक जीवन की महत्ता अपने पूज्य महापुरुषों के हृदय में विश्वस्त स्थान बना लेने में है। उनके मनोगत

भावों और वचनों को समझकर कार्य करने में है। उत्तराध्ययन सूत्र की यह गाथा इस बात में साक्षी है –

मणोगयं, वक्कगयं जाणित्तायरियस्सउ।
तं परिगिज्झ वायाए कम्मुणा उववायए।।

अर्थात् विनीत साधक आचार्य की मनोगत और वचनगत बातों को समझकर तथा अपने कथन द्वारा उन्हें विश्वास दिलाकर कार्यरूप में परिणत करे।

साध्वी श्री आनंद कुमारी जी का जीवन इसी साँचे में ढला हुआ था। आपके जीवन के किसी भी कोने में दुर्बलता नहीं थी। आप सतर्क और प्रामाणिक ढंग से रहती थीं क्योंकि प्रामाणिक जीवन अवश्य ही विश्वासदायक होता है।

साध्वी श्री आनंद कुमारी जी के प्रामाणिक जीवन के विषय में कोई प्रमाण दिखाना और उसके द्वारा उनके विश्वस्त-जीवन की झाँकी दिखाना कोई अर्थ नहीं रखता। क्या सूर्य को दिखाने के लिए भी दीपक की आवश्यकता है? कभी नहीं। साध्वी श्री आनंद कुमारी जी का जीवन गृहस्थ दशा में भी पवित्र और प्रामाणिक रहा और साधुता का बाना पहनने पर भी निष्पक्ष, प्रामाणिक और विश्वसनीय रहा। आप जहाँ भी, जिनके पास भी रहीं, वहीं अपने प्रति विश्वास का वातावरण पैदा किया और जनता को अपने पवित्र गुणों से मोह लिया। साध्वी श्री आनंद कुमारी जी के गुणों से न केवल साधारण जनता प्रभावित थी, अपितु वर्तमान प्रवर्तिनी श्री श्रेयः कुमारी जी म.सा. भी प्रभावित थीं। उन्होंने भी आपके शरीर की दिव्याकृति, शांत प्रकृति और विनयशीलता देखकर मन में गाँठ बाँध ली कि ये साध्वीजी भविष्य में एक तेजोमूर्ति के रूप में प्रतिष्ठित होंगी, जो संप्रदाय की गाड़ी को निपुणता से चलाने का कार्य करेंगी। अस्तु!

ब्यावर की जनता ने भी साध्वी श्री आनंद कुमारी जी म.सा. की विलक्षण आकृति को देखकर आशा बाँध ली कि *'यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति'* जहाँ आकृति होती है वहाँ गुण भी रहते ही हैं। ब्यावर की जनता ने आपको अपने यहाँ ठहराने का अत्याग्रह किया, परंतु आप कैसे ठहर सकती थीं! आपको तो सोजत की भूमि स्पर्श करने के लिए विहार करना था और साथ में वयोवृद्धा महासती श्री बड़ी आनंद कुमारी जी व एवं साध्वी श्री केशर कुमारी जी म.सा. भी थीं। उन्हें भी धीरे-धीरे सोजत ले जाना था। जैन-साधु-साध्वी बिना कारण कहीं एक जगह डेरा जमा कर नहीं रहते। अतः ब्यावर से सोजत की ओर प्रस्थान हुआ।

साभार- धर्ममूर्ति आनंदकुमारी
-क्रमशः

भक्ति रस

अचूक उपाय

- कशिश सुराना, गंगाशहर

ज्ञान के दीप, करुणा के सागर,
गुरु राम के चरणों में नमन सदा शत-शत।
आत्मा के पथ प्रदर्शक, जीवन का उजाला हैं,
गुरुदेव की कृपा से जीवन बनता सुहाना है।।
संयम, तपस्या और सत्य का मार्ग,
गुरु राम के सान्निध्य में मन होता है शांत और हृदय प्रसन्न।
अहिंसा का संदेश, सभी प्राणियों के लिए,
गुरुदेव के चरणों में, मिलता है आत्मिक शांति का संदेश।।
ज्ञानी महापुरुष, दयालु हृदय,
गुरु राम की कृपा से जीवन होता है सरल और सुखमय।
उनके उपदेश, अनमोल रत्न,
जीवन को सार्थक बनाने का, अचूक उपाय हैं।।

गुरु राम

गुरु गुण लिखा न जाए

- सुरेश बोरदिया, मुंबई

सात समंद की मसि करौं, लेखनि सब बनराइ।
धरती सब कागद करौं, गुरु गुण लिख्या न जाइ।।

गुरु की महिमा इतनी महान, विशाल, असीम है कि उसे व्यक्त करना अशक्य है। प्रस्तुत दोहे में तो इतने तक कहा गया है कि सात महासागरों के संपूर्ण जल की स्याही बना दी जाए, जंगलों के सभी वृक्षों की लकड़ी की लेखनी बना दी जाए और संपूर्ण धरती की सतह को कागज बना दिया जाए तो भी गुरु के गुणों को लिखा नहीं जा सकता।

तात्पर्य यह है कि गुरु के गुण इतने अधिक हैं कि शब्दकोष में संकलित सभी शब्दों को कई बार उपयोग में लेने पर भी गुरु के गुणों, विशेषताओं का वर्णन नहीं किया जा सकता और फिर ऐसी योग्यता भी हमारे भीतर कहाँ है कि हम गुरु गुणों की व्याख्या कर सकें!

वह मयूर ही क्या जो बादलों की गर्जना सुनकर नृत्य न करे! वह वृक्ष ही क्या जो बसंत आने पर नवपल्लवों को पुष्पित न कर सके! वह डाल ही क्या जो बहार आ जाने पर सुगंधित पुष्पों से सज्जित न हो सके! अवसर अपने आप में योग्यता का निर्माण कर ही देता है। छोटा-सा दीपक जो दिन के उजाले में निष्क्रिय सा लगता है, उसकी क्षमता नगण्य-सी प्रतीत होती है; लेकिन वही दीपक अपनी क्षमता का पूरा उपयोग कर रात्रि में अंधकार को दूर कर प्रकाश फैलाता है। अगर वही दीपक जगत में फैले अंधकार को देखकर अपनी थोड़ी-सी क्षमता का उपयोग न करे तो वह क्षमता किस काम की? जितनी क्षमता विद्यमान हो, उसका उपयोग तो करना चाहिए। पतझड़ में पूरी तरह से पत्तियों से रहित हुआ वृक्ष बसंत के आगमन के साथ स्वतः पल्लवित हो जाता है। पल्लवित होने की क्षमता उसके अंदर विद्यमान होती है। नहीं तो अंदर से सूख चुका वृक्ष का ठूँठ कितने ही बसंत आ जाने पर भी नवपल्लवों से शोभित नहीं होता। कारण, क्षमता से रहित होना। आचार्य भगवन् की महिमा को व्यक्त करने के लिए हमारे भीतर कुछ न कुछ क्षमता, शक्ति तो अवश्य होगी। वही अल्पशक्ति अवसर आने पर गुरु गुण गाने के लिए क्रियान्वित हो जाती है।

रामायण में श्रीराम के वनवास काल का एक प्रसंग हैं। लंका जाने के लिए समुद्र पर पुल बनाया जा रहा था। विशाल समुद्र की खतरनाक लहरों के बीच पुल बनाना आसान नहीं था और श्रीराम के पास था ही क्या? सिर्फ वानर सेना। उफनते समुद्र के सामने वानर सेना की क्या बिसात? लेकिन वानर सेना अपनी क्षमता अनुसार कार्य करने में जुट गई। वानर पत्थर लाकर उन पर राम नाम लिखकर पानी में डालते गए और वे पत्थर पानी में डूबने की बजाय तैरने लगे। इन्हीं तैरते पत्थरों से समुद्र की सतह पर पुल निर्मित होता रहा।

एक दिन राम स्वयं यह कार्य देखने आए। देखकर आश्चर्यचकित हुए कि हर पत्थर पानी में डूबने की बजाय तैर रहा था। वानर सेना द्वारा डाले जा रहे पत्थरों को देखकर सहसा राम के मन में विचार आया कि एक पत्थर में भी अपने हाथों से डालकर देखता हूँ। इसी विचार के साथ बड़ी उत्सुकता से राम ने एक पत्थर लिया और इस आशा के साथ पानी में छोड़ दिया कि यह पत्थर भी तैरेगा, लेकिन वैसा नहीं हुआ, अपितु वह पत्थर तो पानी में डूब गया।

राम ने बड़े आश्चर्य के साथ डूबते हुए उस पत्थर को देखा और वानरों द्वारा डाले गए पत्थरों को तैरते हुए देखे जा रहे थे। राम ने पुनः एक और पत्थर लेकर पानी में छोड़ दिया और आशान्वित थे कि ये पत्थर तो अवश्य तैर जाएगा, लेकिन आशा के विपरीत वह पत्थर भी पानी में डूब गया। अब तो उनके आश्चर्य का कोई पार ही नहीं रहा कि ऐसा क्यों?

राम ने अपने आसपास देखा तो कुछ दूरी पर हनुमान जी मुस्कुराते हुए दिखे। हनुमान जी राम की तरफ देखकर लगातार मुस्कुराते रहे। राम को समझते देर नहीं लगी कि हनुमान जी ने सबकुछ देख लिया है। फिर भी पूछा—हनुमान! तुमने कुछ देखा तो नहीं? हनुमान जी की मुस्कुराहट अब कई गुना बढ़ गई। वे कहने लगे—प्रभो! मैंने सबकुछ देख लिया है और अच्छी तरह से देखा है।

राम—तुमने क्या देखा, हनुमान?

हनुमान—प्रभो! मैंने देखा कि आपने जो पत्थर समुद्र में डाले वे तैरने की बजाय डूब गए और यही बात मेरी मुस्कुराहट का भी कारण है।

राम—हनुमान! तुमने ये सब देख लिया है तो कोई बात नहीं, लेकिन तुम यह और किसी से कहना मत।

हनुमान—प्रभो! यह बात तो मैं सभी को बताऊँगा और शीघ्र ही बताऊँगा।

हनुमान ने जोर-जोर से आवाज देकर सभी वानरों को अपने पास बुलाया। राम विचारमग्न हो गए कि सभी को यह पता चलने पर मेरे बारे में क्या सोचेंगे! सभी के आ जाने पर हनुमान उनको उस स्थान पर ले गए और कहने लगे—भाइयो! मेरे प्रभु ने भी पानी में इस स्थान पर दो पत्थर डाले थे, लेकिन दोनों पत्थर डूब गए। अब तो वानर सेना आश्चर्यचकित थी कि हमारे द्वारा डाले गए पत्थर तैर रहे हैं और प्रभु द्वारा डाले गए पत्थर डूब गए। ऐसा क्यों?

हनुमान ने अपनी मधुर मुस्कान के साथ बताया कि पत्थर जब तक मेरे प्रभु के हाथ में थे तब तक सुरक्षित थे, लेकिन जैसे ही प्रभु ने छोड़े तो वे डूब गए। इसका अर्थ है कि प्रभु के हाथ से छूटने के बाद तो डूबना ही है। प्रभु से मुखातिब हो हनुमान ने कहा—प्रभो! यह सत्य है कि जो आपके हाथ से छूट गया, उसे तो डूबना ही है। हनुमान ने कितनी अच्छी बात कह दी कि जो राम के हाथ से छूट गया, वह कैसे तिरेगा?

प्रस्तुत प्रसंग में हनुमान ने श्रीराम की महिमा का बखान किया है। यह तो हनुमान की श्रद्धा-भक्ति थी, जिससे उन्होंने श्रीराम की महिमा को फैलाने जैसा उच्च कार्य किया। हनुमान की भक्ति कोई सामान्य भक्ति नहीं थी। सदियाँ बीत गईं, लेकिन उनकी भक्ति को अभी तक याद किया जाता है।

श्रीराम की महिमा का गान अवसर आने पर हनुमान ने किया था। आज वैसा अवसर हमें भी मिला है। हमें श्रीराम मिले हैं। अयोध्या वाले राम नहीं, देशनोक वाले राम! बस हमें हनुमान बनकर उनकी महिमा को बढ़ाना है, फैलाना है। अवसर जैसा हनुमान को मिला था, वैसा हमें वर्ष 2022 में उदयपुर चातुर्मास से प्राप्त हुआ, जो अब तक चल रहा है। महत्तम शिखर महोत्सव के समापन तक हमारे राम का गुणगान करने, उनके गुणों का प्रचार-प्रसार करने का विशेष अवसर हमारे पास है।

आचार्य भगवन् के जीवन चारित्र का एक-एक पल, एक-एक अक्षर हमारे लिए प्रेरणादायक है। उनके संपूर्ण गुणों की व्याख्या करना हमारे लिए दुष्कर है, लेकिन हम अपने सामर्थ्य अनुसार, क्षमता अनुसार भगवन् के गुणों को जन-जन तक पहुँचाने जैसा श्रेष्ठ कार्य कर सकते हैं। सागर के किनारे बैठा व्यक्ति लहरों की गिनती नहीं कर सकता, लेकिन लहरों को देख तो सकता है। बस, हम भी आचार्य भगवन् के जीवन चारित्र से ऐसे प्रसंग, जो हमने प्रत्यक्ष देखे हों, सुने हों, जो हमारे लिए अविस्मरणीय बन गए हों, उन्हें अपने तक ही सीमित न रखकर जन-जन तक पहुँचाने का अनुपम कार्य करें। हम हनुमान न बन सकें, लेकिन हनुमान जैसा बनकर अपने भगवन् की महिमा को बढ़ाने का लक्ष्य अवश्य रख सकते हैं।

ऐसे अविस्मरणीय प्रसंगों को श्रमणोपासक के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाना आसान रहेगा। फरवरी 2025 तक श्रमणोपासक में ऐसे प्रसंग आप द्वारा प्रेषित किए जा सकते हैं।

महत्तम आरोग्यम्

- डॉ. आभाकिरण गांधी, धागड़मऊ

म - मेरी आत्मा में अनंत शक्ति है।
ह - हर क्षण मैं प्रखर पुरुषार्थ करूँ।
त्त - तत्त्व चिंतन की गहराई में डूबूँ।
म - मोक्ष मंजिल को प्राप्त करूँ।
आ - आत्मानुभूति के रस को पाऊँ।
रो - रोग, शोक, संताप, राग-द्वेष का ताप
ग्य - गायब जब हो जाते हैं।
म् - महत्तम आरोग्यम् की उपलब्धि को पा जाते हैं।

मनुष्य की जिंदगी संसार की बेशकीमती उपलब्धि है, जिसमें संभावनाओं के अखूट स्रोत भरे हुए हैं। इनसान वह सब कर सकता है जो इस सृष्टि में और कोई नहीं कर सकता। इसी कारण देवगण भी सदा मानव जन्म के लिए लालायित रहते हैं।

जीवन को न मैनेज करो और न डेमेज करो,
बल्कि दुर्लभ जीवन पर विजय प्राप्त करो।
प्रभु महावीर की जीवनचर्या से डायरेक्शन लो,
आज ही मन के डायरेक्टर को बेरोजगार करो।
ताकि वर्ल्ड उनकी चेअर पर बैठकर,
शांति और आनंद का आस्वादन ले सको।।

अंधेरे घर में यदि कोई अचानक दीप जला दे तो प्रकाश हो जाता है। कीचड़ से भरे तालाब में एक कमल खिल जाए तो तालाब का सौंदर्य बढ़ जाता है। इसी प्रकार जीवन में भी महत्तम आरोग्यम् का दीप जल जाए तो जीवन, महाजीवन बन जाता है। चीन के महान दार्शनिक ताओ के पास एक बार चुंगसीन नामक एक जिज्ञासु आया। उसने लंबे समय तक भक्तिभाव से उनकी सेवा की और एक दिन उदास स्वर में बोला—''इतने दिन हो गए, आपने मुझे कुछ भी नहीं समझाया। मैं धर्म का रहस्य जानने आया था, किंतु आप इस मामले में सदा मौन रहे।'' यह सुनकर ताओ ने मधुर स्वर में कहा—''जिस दिन से तुम यहाँ आए हो उसी दिन से मैं तुम्हें धर्म का राज समझा रहा हूँ। फर्क सिर्फ इतना है कि तुम मेरे शब्दों में धर्म ढूँढ़ रहे हो और मैं तुम्हें आचरण से बता रहा हूँ। तुमने धर्म को जीवन से अलग समझ रखा है और यही तेरा भ्रम है। जीवन की डायरी में नोट कर लेना धर्म का अर्थ जीवन की समग्रता में निहित है। धर्म जीवन की ऐसी तर्ज है जो सिर्फ जीकर पहचानी जाती है। अतः धर्म, प्रेम का पुल और सौहार्द का सेतु होने से वह सार्वजनीन है, केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं। महत्तम आरोग्यम् तभी जीवित हो पाएगा जब उसका परिणाम जीवन में 'आज' दिखाई दे। अतः धर्माचरण में देरी मत करना। धर्म को केवल मंदिर, मस्जिद, स्थानक या गिरिजाघर में नहीं वरन् प्रायोगिक जीवन में पल-पल जीना।

महत्तम आरोग्यम् मानवता का मुकुट पहन ले तो परिवार की दरारें, जीवन की विषमता, भाई-भाई का वैमनस्य एवं राष्ट्र की परेशानियों को स्थान कहाँ मिलेगा! आज धर्म मानवता का मुकुट नहीं बल्कि मरघट बन गया है। एक व्यक्ति ने सोचा, मैं समुद्र में स्नान कर लूँ तो मुझे सभी तीर्थों के स्नान का फल मिल जाएगा क्योंकि गंगा, यमुना आदि सभी नदियाँ समुद्र में ही मिलती हैं। अतः वह दूसरे दिन समुद्र किनारे जाकर बैठ गया। सुबह से

शाम हो गई, फिर भी वह तट पर बैठा रहा।

एक यात्री ने उससे कहा—तुम नहाने आए हो तो नहा लो। इस तरह कब तक बैठे रहोगे? वह बोला—मैं सोच रहा हूँ कि जब सागर की लहरें थमेंगी तब मैं स्नान करूँगा। यात्री ने गंभीर स्वर में कहा—समुद्र की लहरें कभी बंद नहीं होतीं क्योंकि सागर कभी शांत नहीं होता। अगर तुम्हें समुद्र में स्नान करना है तो लहरों का त्रास सहना ही पड़ेगा। इसी प्रकार जीवन में धर्माचरण हेतु उस दिन का इंतजार मत करना कि जब सब कुछ ठीक होगा तब मैं धर्म करूँगा। वह दिन जीवन में कभी नहीं आएगा। जब तक जीवन है तब तक जिम्मेदारी एवं कठिनाइयों की लहरें सदा बनी रहेंगी।

पानी का धर्म शीतलता, अग्नि का धर्म उष्णता, फूल का धर्म खिलना और काँटे का धर्म चुभना है तो इनसान सोचे कि उसका धर्म क्या है? बिना धर्म के जीवन संभव नहीं। धर्म तो जीवन बाँसुरी का स्वर है। बेसुरा जीवन किस काम का? मानव जीवन दिव्य शक्तियों का भंडार है। अनंत ऊर्जा का स्रोत उसमें प्रवाहमान है। तलवार को परखना हो तो उसकी धार को देखा जाता है, म्यान को नहीं। म्यान तो उसका आवरण है। आभूषण की परख भी उसकी सच्चाई से होती है। ऐसे ही मनुष्य की परख उसके आचार-विचार व व्यवहार से होती है, वेशभूषा से नहीं। पहनावा तो बाहरी रूप है। ऐसे ही साधक की परख राग-द्वेष की मंदता से होती है। मात्र धर्म क्रिया साधना नहीं क्योंकि धर्म क्रिया तो मुख्यपृष्ठ मात्र है। आत्मनिर्भरता मात्र विचार करने से नहीं आएगी और न औपचारिकता के बंधनों में उलझकर स्वावलंबन का ख्याल उठता है। आत्मावलंबी बनने हेतु अपने विचारों के अनुरूप स्वयं को ढालने की कोशिश करनी होगी।

संसार में दो प्रकार की मनोवृत्तियाँ शासन करती हैं, एक हीन मनोवृत्ति और दूसरी श्रेष्ठ मनोवृत्ति। जो हीन मनोवृत्ति के शिकार हैं वे अपने को तुच्छ मानते हैं। अपनी विशेषताओं को भी क्षुद्र और घटिया समझते हैं। ऐसे खोखले इनसान संसार में उन्नति नहीं कर सकते। अपने को जो निकृष्ट मानेगा उसका उत्थान कैसे संभव है? अतः अपनी जिंदगी को जो नाचीज समझेगा वह अक्षम ही बना रहेगा। श्रेष्ठ मनोवृत्ति वाले विवेक रूपी दीप के प्रकाश में अपने आपको कामना, क्रंदन, क्रीड़ा से रहित बनाकर उच्च श्रेष्ठता को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। स्वाति की प्रत्येक बूँद में मोती की संभावना होती है, परंतु जब तक उसे सीप रूपी पात्र का सहारा नहीं मिलता तब तक मोती उत्पन्न नहीं होता। इसी प्रकार जिनवाणी कहती है कि प्रत्येक आत्मा में परमात्मा बनने की क्षमता है, किंतु जब तक उसे साधना रूपी सीप की पात्रता का अवलंबन नहीं मिलेगा तब तक सिद्धि नहीं मिलती।

जिंदगी एक प्रतियोगिता है और इस प्रतियोगिता में हम सभी ने भाग लिया है। अगर विजयी होना है तो संसार के हर प्राणी की संवेदना का सम्मान करें। जौहरी की दृष्टि में स्वरूप से सभी हीरे समान होते हैं। चाहे वे खदान की मिट्टी में सने हों या स्वर्ण में जड़े हों। दुकान में पड़े हों या तिजौरी में बंद हो। वह उनमें कोई भेद नहीं मानता। भेद मात्र बाह्य विकास को देखने, परखने वाली दृष्टि का है। जिस प्रकार अंतर्दृष्टि से हीरा हर दशा में मूल्यवान है, ऐसे ही स्वरूप की दृष्टि से सभी आत्माएँ समान हैं। अंतर केवल विकास की अपेक्षा से है।

जैसे घड़ी में एक मुख्य चक्र चलता है तो सारी सूइयाँ भी चलने लगती हैं। चक्र के रुक जाने पर अन्य पुर्जे भी रुक जाते हैं। स्पष्ट है कि चक्र की गति का अच्छा या बुरा असर सभी पुर्जों पर पड़ता है। ठीक इसी प्रकार हमारी आत्मा के शुभ एवं शुद्ध भाव का प्रभाव पूरे वायुमंडल पर पड़ता है। अतः हम स्वयं को जानें, समझें और पहचानें। यही महत्तम आरोग्यम् हैं।

तुम साधना के शिखर स्वरूप हो,
वात्सल्य के अनुपम पैगाम हो।
गुरु की आराधना व साधना से ही,
मिलता आरोग्यम् का धाम है।।

बँटवारा धन का हो, मन का नहीं

- गौतम पारख, राजनांदगाँव

भाई, भैया आदि शब्दों के उच्चारण मात्र से ही न जाने क्यों आत्मीयता झलकने लगती है? भाई शब्द न जाने इतना ताकतवर क्यों है? सामान्य बोलचाल की भाषा में भी नाम से संबोधित न कर जब हम 'भाई' शब्द से संबोधित करते हैं तो सहसा भाव जगत में अपनेपन का अहसास होने लगता है। बहन जब 'भैया' कहकर पुकारती है तो मानो हृदय में अपनत्व का झरना बहने लगता है। 'भैया' शब्द की पुकार व्यक्ति को एक बार ठहरा देती है और सोचने-समझने का पैगाम दे जाती है। मुसलमानों की परंपरा तो भाई के साथ 'जान' जोड़कर उसे 'भाईजान' बना देती है। मानो 'भाईजान' शब्द थके हुए कदमों में जान भर देता है। ईसाई लोग भी जब 'ब्रदर' कहकर पुकारते हैं तो प्रेम में पवित्रता का उफान उठने लगता है।

कुरुक्षेत्र में जब दो भाई कौरव और पांडव आमने-सामने खड़े हो गए तो कौरव भाइयों को सामने देखकर अर्जुन रुक गए, ठिठक गए और पीछे हटने लगे। यही तो भाई शब्द की अनोखी कहानी है। ये बात अलग है कि पांडवों को अन्याय, अतिक्रमण, अनीति के विरुद्ध लड़ाई लड़नी थी, न कि भाइयों के विरुद्ध। इन परिस्थितियों में **'सत्यमेव जयते'** को जयवंत रखने हेतु युद्ध के मैदान में ही कृष्ण को गीता का उपदेश देना पड़ा। गीता के उपदेश ने अर्जुन को अन्याय के विरुद्ध शस्त्र उठाने का संबल दिया।

जैन कथामाला के अनुसार, चंद्रयश और नमिराय, दोनों युद्ध के मैदान में आमने-सामने खड़े हो गए। युद्ध की भेरी बजने लगी और दोनों शस्त्र लेकर आमने-सामने खड़े हैं। माता मदनरेखा, जो साध्वी बन चुकी थीं, को युद्ध की सूचना मिली। साध्वाचार का पालन करते हुए माता मदनरेखा युद्ध के मैदान में पहुँची और रुको..., रुको... की आवाज लगाने लगी। चंद्रयश माता मदनरेखा को पहचान गया। माता को देखकर उसके आश्चर्य मिश्रित खुशी का पार नहीं रहा। मदनरेखा ने चंद्रयश से कहा कि तुम्हारे सामने जो शस्त्र लेकर खड़ा है वह तुम्हारा छोटा भाई नमिराय है। मैंने उसे जंगल में जन्म दिया। तुम दोनों बिछुड़ गए थे। तुम दोनों मेरी ही संतान हो। यह बात दोनों भाइयों ने सुनी और युद्ध के मैदान में ही दोनों एक-दूसरे को पुकारने लगे– भैया, भैया, भैया! दौड़कर गले मिले और दोनों भाइयों ने एक-दूसरे को जकड़कर पकड़ लिया। दोनों के अश्रुधारा बह रही थी। भाई-भाई के बीच युद्ध रुक गया। भाइयों का मिलन देखकर दोनो पक्षों के सैनिकों की आँखें भर आईं। यही तो भैया, भाई शब्द का कमाल है।

दो भाई, राम और श्याम संपन्न व शिक्षित थे। यौवनावस्था में दोनों ने पारिवारिक व्यवस्था के बीच अलग-अलग रहना प्रारंभ कर दिया। अपने-अपने परिवारों, व्यवसाय में दोनों सानंद जीवनयापन कर रहे थे। दोनों भाई राजनीति में प्रवेश कर अलग-अलग राजनैतिक पार्टियों से अपनी राजनीति करने लगे। दोनों दलों की वैचारिक भिन्नता, अलग-अलग कार्यशैली, प्रतिद्वंद्विता के कारण दोनों भाइयों में दूरी बढ़ने लगी। मानो कटुता, वैमनस्यता का प्रवेश हो गया। संयोगवश दोनों ही राजनैतिक दलों ने

चुनाव में अपनी-अपनी पार्टी से दोनों ही भाइयों को एक ही क्षेत्र से टिकट दे दिया। दोनों भाई प्रतिद्वंदी बनकर पूरे ताम-झाम से चुनाव लड़ने लगे। गली, मोहल्लों, झोपड़ियों, महलों में दर-दर वोट माँगते घूमने लगे।

बड़े भाई राम की पुत्री संगीता गर्भवती थी। गर्भावस्था में गर्भ के परिपालन के लिए वह पीहर आई हुई थी। चुनाव प्रचार अंतिम दौर में था। इधर संगीता के प्रसव पीड़ा बढ़ने लगी। निकट के शहर में उसके चाचा श्याम के पुत्र डॉ. आदित्य का नर्सिंग होम था। उस क्षेत्र का वह माना हुआ चिकित्सक था। संगीता को उसी नर्सिंग होम में भर्ती किया गया। बहन के भर्ती होते ही डॉक्टर भाई चिकित्सा में लग गया। चिकित्सक भाई ने बहन की सेवा में कोई कमी नहीं रखी। बहन संगीता ने पुत्र को जन्म दिया। माँ-बेटा दोनों स्वस्थ थे।

प्रसव कार्य संपन्न होने पर राम अपनी पुत्री को देखने आया। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि चुनाव की इस कटुता के बीच उसका चिकित्सक भतीजा अपनी बहन के प्रसव में पूरे मनोयोग से लगा हुआ था। राम अपने भतीजे आदित्य से कहने लगा कि नर्सिंग होम का कितना बिल हुआ? मैं तुम्हें दोगुनी राशि देना चाहता हूँ। तूने मेरी पुत्री व उसकी संतान की जान बचाकर सकुशल प्रसव कराया है। डॉ. आदित्य ने अपने बड़े पिताजी से कहा—''क्या मैं अपनी बहन के इलाज का पैसा लूँगा? मुझे धिक्कार है। यदि आपको मुझे कुछ देना ही है तो एक वचन दीजिए। आप और मेरे पिताजी एक माँ की कोख से जन्मे हैं। माँ जब अपने बच्चे को जन्म देती है तो उसे असह्य वेदना होती है। अत्यंत पीड़ाकारी वेदना सहकर आप दोनों को आपकी माता ने जन्म दिया है। आज आप एक-दूसरे के दुश्मन बनकर वोट के लिए दर-दर घूम रहे हो! माँ की कोख की दर्दभरी दास्तान, चित्कार भरी आहें लेती हुई पीड़ा आप दोनों भाइयों को सुनाई नहीं देती क्या? क्या आप लोगों का जमीर मर गया है? राजनीति के लिए माँ की कोख को बदनाम मत करो।''

अपने भतीजे की बात सुन बड़े पिता राम की आँखें खुल गईं। डॉ. आदित्य के पिता श्याम भी सारी बातें सुन रहे थे। वे भी सिहर उठे। दोनों भाई गले मिलकर रोने लगे।

काश, भाइयों को माँ की कोख की आवाज सुनाई देती रहती तो धन, संपत्ति, जायदाद आदि तुच्छ कारणों से न्यायालय में आमने-सामने खड़े नहीं होते और **'भाई जैसा बैरी नहीं'** वाक्य भी सदा-सदा के लिए मिट जाता। काश व्यक्ति पत्नी और माँ के बीच समन्वय बना लेता तो पारिवारिक सुख-शांति का दृश्य एक नई कहानी लिखकर अन्यों के लिए प्रेरणा बन जाता।

प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि 'भैया' शब्द सदैव हमारे कानों में गूँजता रहे, ऐसी सोच, समझ, समर्पण देना। व्यवस्था की दृष्टि से भले ही संपत्ति का बँटवारा करना पड़े, लेकिन अंतिम साँस तक प्रेम का बँटवारा न हो। हे प्रभो! ऐसी शक्ति, ताकत, पराक्रम एवं सोच हमें देते रहना।

आत्मा जब तक बहिर्गामी रहती है और बाहर के पदार्थों को पाने के लिए भटकती है, तब तक उसे अपनी आंतरिक शक्ति का बोध नहीं हो पाता, क्योंकि वैसी बहिर्गामिता में ज्ञान की सही दृष्टि भी नहीं होती। तीर्थंकरों एवं ऋषि-मुनियों का ज्ञान अपनी आत्मा की आंतरिकता में ही प्रस्फुटित होता है और वहीं से आत्मा के अव्यक्त ज्ञान को वह व्यक्त करते हैं। श्रोतागण जब उनके उपदेशों को सुनते हैं और समझकर उन पर चिंतन करते हैं तभी आंतरिकता जागृत बनती है और अपने भीतर समाए हुए ज्ञान को प्रकट करने लगती है। उस ज्ञान से जो वह प्रकाश पाती जाती है, वही उसकी श्रेष्ठ उपलब्धि होती है।

– परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

महत्तम शिखर का शिखर संकल्प

- गणेशलाल डूंगरवाल, चित्तौड़गढ़

परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. का 50वाँ दीक्षा दिवस निकट आ रहा है, जिसे पिछले लगभग ढाई वर्षों से 'महत्तम महोत्सव' के रूप में मनाया जा रहा है। उसी के अंतर्गत एक लेखक के भाव गुणानुवाद के रूप में प्रस्तुत हैं।

महत्तम यानी महानतम अर्थात् महानता की वह अंतिम सीमा जिससे ऊपर और कोई महान नहीं हो। आचार्य श्री रामेश तीर्थंकरों द्वारा स्थापित तीर्थ को जिस शुद्धाचार और अलौकिकता के साथ आगे बढ़ा रहे हैं, वह भरत क्षेत्र के इस कालखंड में कोई विरला ही कर सकता है। आचार्य श्री रामेश साधुमार्ग के मूल स्वरूप के संरक्षण व पोषण के साथ-साथ उसकी ख्याति और महिमा में महत्तम पुरुष बनकर चार चाँद लगा रहे हैं।

तीर्थंकर समान महानता

वर्तमान काल में तीर्थंकर तो साक्षात् उपस्थित नहीं हैं, लेकिन हम भाग्यशाली हैं कि तीर्थंकर सरीखे गुरु राम का सान्निध्य हमें मिला है। उनकी अतुलनीय आत्मिक साधना तथा संघ संचालन की प्रभावी शैली में सहज ही हमें प्रभु महावीर की छवि देखने को मिल रही है। प्रभु की तरह ही आपके अनंत गुणों को गिन पाना हमें अपनी सामर्थ्य से परे लगता है। आपके ज्ञान-ध्यान में भी हमें हमारे जन्म-जन्मांतरों के पापों को नष्ट करने की क्षमता महसूस होती है। आपका नाम स्मरण, दर्शन, प्रशांतमना स्वभाव, महाव्रतों पर मेरुसम अडिगता, अतिशयकारी वाणी आदि सभी प्रभु की तरह ही मंगलकारी लगते हैं। यहाँ तक कि आपकी भक्ति से भी हमें ऐसी शक्ति मिलती है, जिससे हम मुक्ति के मार्ग पर द्रुत गति से आगे बढ़ने के लिए संकल्पित हो जाते हैं।

नाम स्मरण की महानता

राम शब्द में 'र' ऋषभ का, 'म' महावीर का और मध्य में 'आ' का स्वर पूर्णता का प्रतीक है। इसलिए यह कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भगवान ऋषभ से

लेकर भगवान महावीर तक संपूर्ण चौबीसी का सहज स्मरण जिस एक शब्द से हो जाए, वह शब्द है– 'राम'। आचार्यत्व के गुणों की अपेक्षा से हमें आचार्य श्री रामेश में सुधर्मा स्वामी से लेकर आचार्य श्री नानेश तक के सभी पूर्वाचार्यों की छवि देखने को मिलती है।

शिखर यात्रा

सन् 1990 में चातुर्मास में परम पूज्य आचार्य श्री नानेश ने चित्तौड़गढ़ की पावन धरा पर सकल संघ की साक्षी में पूज्य रामेश को 'मुनि प्रवर' की उपाधि प्रदान की। सन् 1992 में बीकानेर के राजमहलों में आपको युवाचार्य की चादर ओढ़ाई गई। तब से लेकर आज तक के अपने आचार्यत्व काल का आकलन करते हुए स्वयं पूज्य आचार्य श्री रामेश 'आरोह' में भावाभिव्यक्ति करते हैं विपरीत परिस्थितियों में भी संघ का अद्भुत अनुशासन देखने को मिला। आगे यह भी अभिव्यक्त किया है कि महापुरुषों के आशीर्वाद, चतुर्विध संघ के साहस, सूझ-बूझ और परिश्रम का ही यह फल है कि यह संघ रूपी उपवन अब पहले से और ज्यादा निखरकर अपनी सौरभ और सुषमा से निरंतर शोभित हो रहा है।

शिखर संकल्प

पूज्य आचार्य श्री रामेश कितने निर्लिप्त भावों में रमण करते हैं कि उन्होंने संघ की अनगिनत क्रांतिकारी एवं अद्वितीय उपलब्धियों का सारा श्रेय अन्यों को दे दिया। यह उनकी 'महत्तम महानता' का द्योतक है। ऐसे में यह महत्तम शिखर वर्ष हम सभी के लिए निम्नलिखित **'शिखर संकल्प'** लेने का एक पावन अवसर बन गया है। शिखर संकल्प के मुख्य बिंदु –

1. हम अपनी समकित को इतना गाढ़ा (गाढ़तम) कर लेवें कि कोई भी स्थिति-परिस्थिति उसको भेद न पाए।
2. हम गुरु और संघ के प्रति अपने कर्तव्यों को प्राणप्रण से निभाएँ।
3. हमें गुरु आज्ञा सदैव शिरोधार्य हो।
4. हमारी गुरु समर्पणा उत्कृष्ट भक्ति भावों से परिपूर्ण हो।
5. हम संघनिष्ठ बन संघ की प्रतिष्ठा में सदैव सहयोगी बनें।

आचार्यों द्वारा संरक्षित, संवर्द्धित प्रभु महावीर के इस पवित्र शासन का हमारे जीवन पर अनंत-अनंत उपकार है। इसी शासन की निर्मल छाँव में हमारी ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप रूपी आराधना विकसित हो रही है। शासन की सुरक्षा करना हम सबका दायित्व होता है। 'दशाश्रुत स्कंध' में संघ रूपी उपवन में अशांति पैदा करने वाले को महामोहनीय कर्म का बंधकर्ता बतलाया गया है। अतः हमें किसी भी स्थिति-परिस्थिति में ऐसे महामोहनीय कर्म बंध से बचना चाहिए।

दीक्षा निवेदन

परमागम रहस्यज्ञाता, परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. ने विशेष कृपा कर आगामी 7 फरवरी 2025 को संपन्न होने वाली दीक्षाओं के लिए साधुमर्यादा में रखे जाने वाले आगारों सहित नोखामंडी संघ को स्वीकृति प्रदान की है। इस अवसर पर मुमुक्षु सुश्री ज्योति जी काँठेड़ (बाड़ी, निम्बाहेड़ा), मुमुक्षु सुश्री श्रद्धा जी आँचलिया (बेगूँ), मुमुक्षु सुश्री युक्ता जी चोरड़िया (राजनांदगाँव), मुमुक्षु सुश्री करिश्मा जी लुणिया (नोखामंडी) की भव्य जैन भागवती दीक्षाएँ होनी संभावित हैं। आप सभी सुश्रावक–सुश्राविकाएँ दीक्षा अनुमोदना कर कर्मनिर्जरा का लाभ लेने का लक्ष्य रखावें।

– श्रमणोपासक टीम

पतन से उत्थान की ओर

– श्रमणोपासक

'माता एक सुनाता हूँ, दीक्षा लेने जाता है, आज्ञा दे मैया' की मधुर स्वरलहरी से माता चौंकी। माता ने देखा कि सामने उसका नयनतारा, हृदय का टुकड़ा, प्यारा लाल खड़ा है। हाथ जोड़कर नम्र, पर हठ भरे शब्दों में दीक्षा अंगीकार करने की अनुमति मांग रहा है।

माता यह अलौकिक, अचिंतनीय दृश्य देखकर शांत रही। फिर अपने प्यारे लाल को प्रेम भरे शब्दों में समझाने लगी। माता ने संयम-साधना की विकटता बड़ी विशदता से पुत्र के समक्ष प्रस्तुत कर जोर दिया कि ये दिन तेरे खेलकूद के हैं, आनंद बहार के हैं। पर पुत्र का वैराग्य मसानिया थोड़े ही था। वहाँ तो किरमची रंग चढ़ा था।

एक सुदीर्घ समय तक भोग व योग में, ममता व संयम में परस्पर डटकर युद्ध हुआ, पर अंत में योग ने भोग पर विजय प्राप्त कर की। ममता पराभूत हुई और संयम सफल रहा। बालहठ के आगे माता के स्नेह को झुकना पड़ा। माता को दीक्षा की अनुमति देनी पड़ी।

बालक का मस्तक माता के चरणों को प्रेमाश्रु से सिक्त कर रहा था। पर माता, माता ही थी। अपने गोदी के लाल को वह एकाकी संयम पथ पर न भेज सकी। वह भी दीक्षित हुई। माता पुत्र का यह संयम धन्य है।

कल का भोगी अरणक आज योगी है। पाँच समिति, तीन गुप्ति का साधक। माता भी साध्वी है। अरणक ने ज्ञान की साधना की। अब तपस्या का क्रम था और एक दिन पारणे के लिए गोचरी लेने जाते हुए ग्रीष्म की चिलचिलाती धूप में अरणक को नगर की एक वेश्या ने देखा।

अरणक के अनिंद्य, सहज सौंदर्य से रमणी आकर्षित थी। उसकी चंचलता नियंत्रित न रह सकी। उसने दासी द्वारा अरणक को बुलवाया और वन में स्वच्छंद विचरण करने वाला मृग इस रमणी के प्रेमजाल में बिंध ही गया।

आज अरणक पुनः भोगी बन गया। वह उस वैभव भरे प्रासाद में विलासिता व प्रेम की रंगरलियों में मस्त था। उनके यौवन-उपवन में श्रृंगार का गुलाब पूर्ण विकसित हो गया। जहाँ सुख के मधुर कमनीय फूल हैं, वहाँ दुःख के करणशूल भी हैं।

अरणक भूल गए अपनी साधना और विस्मृत कर गए लोकलज्जा एवं माता का आशंकित महान दुःख। पतन का मार्ग कितना सहज व सरल है!

पर माता..., साध्वी माता यह सब सुनकर सहज न रह सकी। वह विक्षिप्त हो गई और अपने प्यारे अरणक की खोज में उन्मत्त बन गई। उसके सामने एक ही प्रश्न व एक ही लक्ष्य था अरणक की खोज। बस यही उसकी साधना थी और यही आराधना।

नगर-नगर, गाँव-गाँव, डगर-डगर में दौड़ती-फिरती है एक रमणी। पैरों में छाले पड़ रहे थे। शरीर क्षीण बन रहा था। न रात की परवाह, न दिन की। न गर्मी की चिंता, न सर्दी की। उसकी निस्तेज आँखें किसी को खोज रही थी। उसके थके-मांदे पाँव बिना हारे दौड़ रहे थे किसी को पाने के लिए। जबान पर एक ही रट... प्यारे

अरणक! ओ मेरे प्यारे अरणक!

गाँव वाले इसे पगली समझकर उपहास और उपेक्षा कर रहे थे, पर रमणी को इसका कहाँ भान, वह तो अरणक के ध्यान में मगन थी।

फिर एक दिन रम्य भवन में सुखशय्या पर वैभव के कमनीय क्रोड़ में हँसते-विहँसते अरणक के कानों में भी करुणा ध्वनि पड़ी—अरणक! मेरे प्यारे अरणक! तुम कहाँ हो? अपनी माता को चिल्लाते व दौड़ते देखा तो अरणक न रह सके और भव्य भवन से निकलकर बाहर आए। वैभव तथा प्रेयसी का प्रणय उन्हें अब बाँधकर न रख सका। आज मृग पुनः मुक्त था और अपने सही रास्ते पर था।

माता के चरणों में अपना मस्तक रख, आँखों से प्रायश्चित्त व दुःख की गंगा-जमुना बरसाते व कँपकँपाते कंठ सहित डरते हुए अरणक ने कहा—''मेरी प्यारी माता! इस नालायक पुत्र को क्षमा करना।'' आज माता ने अपने अरणक को प्राप्त कर लिया था। वह स्वर्गिक आनंद का अनुभव कर रही थी।

वह तो अरणक की भूलों को विस्मृत कर प्रेम व हर्ष के सागर में गोते लगा रही थी। सत्यतः माता का प्रेम पर्वत से भी विशाल व महासागर की अपेक्षा गहरा होता है।

पर अरणक को कहाँ विश्वास? उनका दिल तो दुःख व दर्द से जल रहा था। अपनी भूल उन्हें खाए जा रही थी। पुनः संयमी बने। माता को संतोष था। अरणक अपने पतन को न भूल सके। उन्हें अपने सुंदर व सुकुमार शरीर से घृणा हो गई, क्योंकि इसने पतन का दरवाजा खोला था।

'आतप' परीषह ही तो पतन का प्रेरक था। अतः अरणक एक महाशिला पर जाकर नंगे बदन लेट गए। ग्रीष्म के प्रचंड प्रताप से शिला भट्टी की तरह तप्त थी। मुनि अरणक का शरीर कुछ ही समय में उष्णता के प्रभाव से विनष्ट हो गया और साथ ही उनका पाप व पतन भी। अरणक का स्वागत स्वर्ग में देव लोग कर रहे थे।

जो हमेशा ऊँचा ही रहता है, कभी गिरता नहीं, वह हमारा आदर्श नहीं हो सकता तथा गिरकर पुनः कभी नहीं उठने वाला भी क्या हमें प्रभावित कर पाएगा? हमें तो नव्य-भव्य प्रेरणा प्रदान करता है वह मनस्वी जो गिरकर पुनः उठता है और पतन से उत्थान की ओर जाता है। गिरकर पुनः संभलने वाले अरणक की यह कहानी हमें सदा एक अभिनव प्रेरणा देती रहेगी।

भक्ति रस

प्रभु महावीर के सिद्धांत

- पायल बया, बंबोरा

महावीर के सिद्धांतों पर हम कदम बढ़ाएँ,
देखे थे जो स्वप्न वो साकार हो जाएँ।
अरिहंत बन जिसने धर्मदेशना फरमाई,
लाखों-करोड़ों भव्य जीवों की नैया पार लगाई।।
अहिंसा ही जिनप्रभु का प्रण था,
विलीन हो रहा सिद्धांत, जो प्रभु का मान था।
शूल का स्वागत भी हँसते-हँसते किया।
ऐसा प्रभु महावीर का प्रेम था,
जीवरक्षा हेतु साधु जीवन जीया था।।
संयम पथ पर चलकर तिरे और तिराएँ हम,
मोक्ष के पथिक बन हम भी राह दिखाएँ हम।
गुरुदेव की आज्ञा को शिरोधार्य करें,
नवकार में अपना भी नाम दर्ज करें।।
नमो नाणस्स की माला और ज्ञान को बढ़ाएँ हम,
संयम ही जीवन है, यह घट-घट में पहुँचाएँ हम।
महावीर प्रभु की जिनवाणी को, हर दिल में बसाना है,
उन्हीं के बताए मार्ग पर, आगे बढ़ जाना है।।
हुक्मसंघ की परंपरा को निभाना है,
गुरुवर राम सम हमें भी बन जाना है।
गुरुदेव की राह पर साथ-साथ चलना है,
देखे थे जो स्वप्न उनको साकार कर जाना है।।

The Invisible Burden : Why Women Struggle to Say 'No' ?

- Urja Mehta, Indore

"She had a splitting headache, but the kitchen awaited her. Saying 'no' wasn't an option; after all, isn't that what she's supposed to do as a wife, a daughter-in-law, a mother?" This scenario is all too familiar in many Indian households. Despite the progress society has made, traditional expectations continue to weigh heavily on women. The inability – or refusal – to say 'no' stems not from a lack of will but from a complex web of cultural norms, familial expectations, and personal guilt.

But what does this constant 'yes' do to them? And how does it impact their health, well-being, and overall quality of life?

In our society, women are often conditioned from a young age to prioritize others over themselves. A girl is praised for being 'adjusting', 'sacrificing', or 'understanding', while assertiveness is often misconstrued as arrogance. The fear of being labeled as selfish or 'not a good wife/daughter-in-law' prevents many from standing their ground.

How Temporary Comfort Creates Permanent Discomfort

When women say 'yes' to every demand, they might avoid immediate conflict or guilt. However, this temporary peace often comes at a high cost:

1. Physical Health :

The physical demands of managing a household often lead to chronic fatigue, back problems, and stress-related illnesses. Many women forego regular health check-ups or ignore symptoms simply because they don't have the time or energy to address them.

2. Mental Health :

The emotional burden of always being available and never refusing requests often results in resentment, anxiety, and even depression. Women frequently suppress their desires and aspirations, leading to a loss of identity over time.

3. **Emotional Disconnect :**

The inability to say 'no' also creates a gap in relationships. Constantly sacrificing their needs can lead women to feel unappreciated, which may breed bitterness and impact the family dynamic.

4. **Lack of Personal Growth :**

With all their energy consumed by household responsibilities, many women struggle to pursue hobbies, careers, or passions, leaving them unfulfilled.

Temporary comfort–a moment of avoiding confrontation or guilt–often creates a lifetime of discomfort, resentment, and burnout.

Breaking the Cycle

The cycle of overburdened women and undervalued labor can be broken, but it requires collective effort :

1. **For Women :**
   - **Set Boundaries :** Start small by refusing tasks that can easily be delegated.
   - **Practice Self-care :** Understand that taking time for yourself isn't selfish; it's essential.
   - **Communicate Openly :** Share your feelings with family members to foster understanding.
2. **For Families :**
   - **Redistribute Responsibilities :** Household chores should not be gendered. Encourage equal participation from all family members.
   - **Support Assertiveness :** Appreciate when women set boundaries and respect their decisions.
3. **For Society :**
   - **Challenge Stereotypes :** Media and education should promote examples of empowered women who balance personal and family needs.
   - **Normalize Refusal :** Teach children–boys and girls alike–that saying 'no' is an act of self-respect, not rebellion.

Conclusion

The ability to say 'no' is a simple but powerful act. It's not a sign of defiance, but a step toward a healthier, happier, and more balanced life. As families and societies, we must create spaces where women feel valued for who they are, not just for what they do. It's time to redefine the meaning of a 'dutiful woman' and ensure that no one is compelled to say 'yes' at the cost of their well-being. After all, only when women thrive can families and societies truly flourish.

भक्ति रस

जगत उजियारा

- धीरज मेहता (अधिवक्ता), डूंगला

लगे आहुति, कुछ यों हवन हो,
शुद्ध भाव युक्त अंतर्मन हो।
तप, त्याग, तपस्यामय जीवन हो,
सुंदर जगमग जग उपवन हो।।

हर हृदय सु-भाव से उज्ज्वल हो,
मनुज स्वभाव, निर्मल-निश्चल हो।
धर्म-गंगा की धारा अविरल हो,
सौभाग्य भरा अब हर कल हो।।

हम, संत-चरण शरण के पुष्प बनें,
संत विहार से पवित्र जब भूतल हो।
संत दृष्टि से माटी महकती है,
उस महक में हम भी कण हों।।

कर्म कटे, निर्जरा का फल हो,
पुण्य बढ़ाता, हर पल हो।
समभाव-सा नदियों का नीर बहे,
ज्ञान की ही बस कलकल हो।।

पाँचवाँ आरा सुखमा से पट जाए।
अब देह, महाविदेह में मंगल गाए।।

मेरे गुरुचरण मोक्षपथ के गामी,
वो सिद्ध-पुरुष, वो अंतर्यामी।
वो जिस ओर चले, हम साथ चलें,
मानस को प्रकाशित होना है।।

मुझे अंतर्मन को धोना है,
वीतराग-वैराग बीज बोना है।
तृष्णा से होगी ना संधि अब,
आत्मा को मुक्ति-आनंद से संजोना है।।

कर्म गति में पड़ संसार बँधे,
कई वचन तोड़े कई वादे लाँघे।
मन चला जिधर मैं चला उधर,
मैं पीछे रहा मन आगे-आगे।।

मुक्ति-कमल की थाह मिली,
जैन-कुल मिला, आगम-राह मिली।
चल चले अब चले जाना है,
गुरु सलाह से परम ज्ञान पाना है।।

धन्य-धन्य अब यह जीवन हो,
साधु मन हो, साधु का तन हो।
श्वेत आत्म को श्वेत दुशाला हो,
हृदय में जिनशासन माला हो।।

स्वयं जलूँ, कई दीयों की बाती बनूँ,
सारे जगत में मुझसे उजाला हो!!
सारे जगत में मुझसे उजाला हो!!

भक्ति रस

जैन गौरव बचाएँ

- दीपक बोहरा, मैसूर

गर्व से कहते हैं हम जैन हैं, कहने में कितना अच्छा लगता है!
देते हैं लोग इज्जत जैन को, पाने में कितना अच्छा लगता है!
पर सोचने की बात है, क्या हम सच में इतने अच्छे हैं?
नहीं! सोचने की बात है कि हम सच में कितने सच्चे हैं?
क्या हो गया है जैनियों को कहते हैं सब जनाब,
कहते तो बड़े भुजिया हैं, लेकिन बोर्ड पर लिखते हैं कबाब।
सुंदर से शब्द थे दाल-पकौड़े, केला बज्जी, मिर्ची और दही बड़े,
लेकिन अब वो बड़े, पकौड़े, बज्जी नहीं, कबाब के बोर्ड आ गए बड़े।।
ये क्या हो गया है जैनियों को, खाते हैं शौक से हैदराबादी बिरयानी,
अगर बिरयानी शाकाहार होती तो क्यों कहते इसे वेज बिरयानी?
पहले तो खिचड़ी-कढ़ी, रामप्यारी-पचड़ी बनाती घर की रानी,
परोसते थे इसे बड़े शौक से मिलाकर घी, लगती थी ये सुहानी।।
ये क्या हो गया है जैनियों को, लिखते अपने नाम के आगे जैन,
लेकिन होटलों में जाते हैं तो खोलने में शर्म आती है अपने दो नैन।
क्योंकि आजकल जैनियों की पार्टियों में लाखों की बहने लगी है वाइन,
फिर भी बुकिंग और वेलकम में नाम के आगे लिखते हैं जैन।।
ये क्या हो गया है जैनियों को, कहते हैं हम महावीर की हैं संतान,
महावीर तो भगवान हैं और कहाँ आ गए हैं यहाँ शैतान?
महावीर के कहलाने वाले को तो महावीर की भी सुननी होगी,
मद्य, मांस, शिकार, सट्टे से दूर, यह होती है जैन की पहचान।।
ये क्या हो गया है जैनियों को, रखते हैं मीटिंग-कॉन्फ्रेंस फाइव स्टार होटलों में,
फिर बड़े-बड़े पोस्टर्स, साइन बोर्ड, होर्डिंग्स लगाते हैं सर्किलों पे।
जैनियों की तो सभाएँ होती थीं स्थानक, सभा, भवन और धर्मशालाओं में,
अब तो आयोजन होने लग गए, स्टेटस की अंधी दौड़ से व्यसनशालाओं में।।
ये क्या हो गया है जैनियों को, बंद करना होगा आँख मिचौली खेल को,
पैसे के अहम् में और स्टेटस के भ्रम में, नहीं मोड़ना है जिनशासन की रेल को।
बोहरा दीपक करे अर्ज बचाना है गर, जैन घर, संघ और समाज को,
तो पालन करना होगा हमें जिनशासन के देव, गुरु और धर्म के मेल को।।

गुरुचरण विहार समाचार

मुक्तिपथ के खोले द्वार, राम गुरु की जय-जयकार।
तप-संयम की जय-जयकार, राम गुरु की जय-जयकार।।

सबसे बड़ा पाप मोह मिथ्यात्व है
- आचार्य भगवन्

बच्चों को प्रारंभ से धर्म के संस्कार दें
- उपाध्याय प्रवर

मुमुक्षु हर्षाली जी कोठारी की दीक्षा 3 दिसंबर को ब्यावर में होनी संभावित

भीलवाड़ा, मांडल चौराहा, मांडल गाँव, धुंवाला, जीवलिया, मोड़ का निम्बाहेड़ा, करजालिया, कालियास, मोतीपुर, सोडार, बरसनी, जयनगर।

हरी कैरी से आम बनता है, मीठे वचनों से काम बनता है।
युगनिर्माता राम गुरु जहाँ पधारें, वो स्थान तीर्थधाम बनता है।।

जन-जन में सच्चाई, ईमानदारी, नैतिकता, मानवता व सदाचार का अलख जगाने वाले युगनिर्माता, युगपुरुष, साधना के शिखर पुरुष, मानवता के मसीहा, ज्ञान और क्रिया के बेजोड़ संगम, उत्क्रांति प्रदाता, जन-जन के भाग्यविधाता, नानेश पट्टधर आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. आदि ठाणा-8 मेवाड़ के छोटे-बड़े गाँवों, नगरों को अपनी उत्कृष्ट संयम साधना के अपूर्व तेज के साथ निरंतर पावन, पवित्र कर रहे हैं। बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-4 भीलवाड़ा के उपनगरों में ज्ञान-ध्यान के साथ धर्म की अद्‌भुत अलख जगा रहे हैं। शासन दीपक श्री हर्षित मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-8 विजयनगर क्षेत्र में धर्म का प्रतिबोध दे रहे हैं। शासन दीपक श्री गौरव मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-2 का जोधपुर की दिशा में एवं शासन दीपक श्री मयंक मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-2 का ब्यावर की दिशा में विहार गतिमान है। पूज्य महासतीवर्याओं का विहार एवं धर्मप्रभावना का क्रम निरंतर जारी है। धर्माराधना, तप-त्याग के साथ ही व्यसनमुक्ति संस्कार जागरण कार्यक्रम भी हो रहे हैं। देश-विदेश से श्रद्धालु भाई-बहनों का आवागमन हो रहा है।

3 दिसंबर को मुमुक्षु बहन सुश्री हर्षाली जी कोठारी सुपुत्री अशोक जी-ऊषा जी कोठारी, ब्यावर की जैन भागवती दीक्षा संभावित है। विहार मार्ग के विभिन्न क्षेत्रों के जैन-जैनेतर लोग अलौकिक महापुरुष के साक्षात् दर्शन कर हर्षित एवं पुलकित हो रहे हैं।

महापुरुषों को पुनरागमन हेतु नम आँखों से दी विदाई

जाते-जाते भूल न जाना, लौट के वापिस जल्दी आना

16 नवंबर 2024। प्रात: मंगलमय प्रार्थना में *'मेरे प्यारे देव गुरुवर श्री जिनधर्म महान'* के मधुर संगान के साथ प्रभु एवं गुरुभक्ति की गई। तत्पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए परमागम रहस्यज्ञाता आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि "एकांत सुख रूपी मोक्ष प्राप्त करना प्रत्येक आत्मा का लक्ष्य है। एकांत सुख यानी जहाँ दु:ख, द्वंद्व, मोह नहीं हैं। दु:ख का हेतु मोह-माया हैं। दु:ख क्यों है? क्योंकि मोह का भाव बना हुआ है। मोह का भाव जितना प्रबल होगा उतना ही जीव दु:खी होगा। जिसको मोह नहीं उसका दु:ख समाप्त हो गया। सबसे बड़ा पाप मोह, मिथ्यात्व है। हमने यदि पुरुषार्थ जगा लिया तो मोक्ष के अधिकारी बनने में समर्थ हो जाएँगे।

चातुर्मास अब पूर्ण हुआ है मुनिगण करें विहार।
मित्रो रखना धर्म से प्यार।।

विहार का मतलब विशिष्ट रूप का हार है, जो ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूपी तीन रत्नों से बना हुआ है। जो विशिष्ट हार है, वो मोक्ष की ओर ले जाने वाला बनेगा। इस हार की आराधना से एकांत सुख रूपी मोक्ष प्राप्ति होने वाली है। दूसरे हीरे के हार, सोने के हार, चाँदी के हार आपको संसार में अटकाकर रखते हैं, किंतु ज्ञान, दर्शन, चारित्र का हार निश्चित रूप से मुक्ति की ओर ले जाने वाला है। इसलिए विहार से मन को भारी नहीं बनाना। यह विचार करें कि चार माह में जो आत्मबोध मिला है, उससे आत्मा का संबंध सदैव जुड़ा रहने वाला है। वीतराग अवस्था सुख का अनुभव कराने वाली होती है। वीतराग अवस्था के लिए हमें रत्नत्रय एवं नवकार मंत्र की आराधना करनी होगी।"

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने *'आया कहाँ से कहाँ है जाना'* गीत प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि बाहर की दृष्टि को छोड़कर हमें अंतर् की दृष्टि जागृत करनी होगी। बाहरी पदार्थों में किंचित् मात्र भी सुख नहीं है। मात्र सुखाभास है। आत्म-अध्यात्म में सच्चा सुख है।

साध्वी श्री दिव्यप्रभा जी म.सा. ने फरमाया कि आचार्य भगवन् तीर्थंकर के समान विराजमान हैं। हम दर्शन करके निहाल हो गए हैं। उनकी शिक्षाएँ जीवन में उतर जाएँ तो जीवन धन्य हो जाए।

साध्वी श्री सुनेहा श्री जी म.सा. ने *'भाग्य का सितारा मेरा तू ही, सच्चा सहारा तू ही'* गीत प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि 13 वर्ष 5 माह 16 दिन के बाद बेगूँ में दर्शन हुए और अब चातुर्मास में सान्निध्य मिला। आगे यही निवेदन है कि सदैव सान्निध्य मिले। साध्वी श्री कुसुमकांता जी म.सा. आदि साध्वीवर्याओं ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया। भीलवाड़ा शिखर महोत्सव चातुर्मास के संयोजक एवं संघ मंत्री आदि ने महापुरुषों के उपकारों के प्रति अहोभाव व्यक्त किए। धर्मसभा में भारत सरकार के पर्यावरण संरक्षण के प्रिंसिपल हेड साइंटिस्ट डॉ. रितेश जी विजय

प्रथम बार सामायिक करने हेतु उपस्थित थे।

दोपहर में आराध्य भगवन् एवं उपाध्याय प्रवर ने सान्निध्यवर्ती संतों सहित जैसे ही अरिहंत भवन का ऐतिहासिक चातुर्मास संपन्न कर विहार किया तो उपस्थित हजारों जनसमुदाय ने नम आँखों से पुनरागमन हेतु विदाई दी। संपूर्ण विहार मार्ग **'जाते-जाते भूल न जाना, लौट कर वापिस जल्दी आना'**, **'संयम इनका सख्त है, तभी तो लाखों भक्त हैं'** आदि गगनभेदी नारों से गूँज रहा था। चतुर्विध संघ ने महापुरुषों को भावभीनी विदाई दी।

आचार्य भगवन् आदि ठाणा-10 का कम्यूनिटी हॉल मिराज मैजेस्टिक सोसायटी, भीलवाड़ा में मंगल पदार्पण हुआ। बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर आदि ठाणा-4 अमर समता भवन, भीलवाड़ा में पधारे। शासन दीपक श्री हर्षित मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-8 का मांडल चौराहा से विजयनगर की ओर तथा श्री नीरज मुनि जी म.सा. एवं श्री धीरज मुनि जी म.सा. का बड़े महुआ की ओर विहार हुआ। महासतीवर्याओं का विभिन्न क्षेत्रों में विहार हुआ।

कर्म बाँधने सरल, पर भोगने कठिन

17 नवंबर 2024। परम प्रतापी आचार्य भगवन् आदि ठाणा-10 का मांडल चौराहा स्थित महावीर भवन में जय-जयकारों के साथ मंगल प्रवेश हुआ। प्रवेश पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री यत्नेश मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि राग, द्वेष, कषाय जितना कम होगा उतना ही सुख मिलेगा। क्रोध करने से मन अशांत हो जाता है, इसलिए क्षमा के गुण को धारण करना होगा। अहंकार झुकने नहीं देता। व्यक्ति अकड़ के चलता है। पैसे, बल, ज्ञान, तप का घमंड टिकने वाला नहीं है। जो झुकता है वही आगे बढ़ता है। मान को नम्रता से जीतें। माया को सरलता और लोभ को संतोष से जीतें।

श्री गौरव मुनि जी म.सा. ने **'कर्मों के खेल निराले हैं, ऋषि-मुनि भी इससे हारे हैं'** गीत प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि जिसने जैन दर्शन के अमर सिद्धांत **'कर्म सिद्धांत'** को जान लिया वह कभी मन से विचलित नहीं होता। जैसा कर्म किया है वैसा फल मिलता ही है। तीर्थंकरों को भी अपने कर्मों का फल मिलता है। कर्म बाँधने सरल हैं, किंतु भोगने कठिन हैं। कोई साधु बने तो सर्वश्रेष्ठ नहीं तो व्रतधारी श्रावक तो अवश्य बनें। छोटे-छोटे त्याग-प्रत्याख्यान से जीवन को संवारें। एक शुद्ध नवकारसी भव पार लगाने वाली है। महिला मंडल ने **'जिनशासन के वीरों को वंदन है, अभिनंदन है'** गीत प्रस्तुत किया। ममुक्षु बहन श्रद्धा जी आंचलिया, बेगूँ सभा में उपस्थित थीं। गाड़ी चलाते समय एवं भोजन करते समय मोबाइल का प्रयोग नहीं करने तथा बारह एकासन करने का संकल्प कई भाई-बहनों ने लिया। ब्यावर संघ ने 3 दिसंबर की दीक्षा की विनती प्रस्तुत की। आचार्य भगवन् ने असीम कृपा करके मंगलपाठ प्रदान किया।

अमर समता भवन, भीलवाड़ा में आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. ने अपनी ओजस्वी वाणी में फरमाया कि **''हमारा सारा आनंद दूसरी चीजों पर टिका है। जो चीज अपनी नहीं, उस पर हमारा सुख टिका है। इंद्रिय विषय सुख से भी बड़ा सुख होता है। जो देखा नहीं उसके प्रति सोच कैसे बनेगी? जिसने आत्मा का सुख जाना नहीं वो सच्चा सुख कैसे जानेगा? बाहरी रूप नहीं, भीतरी सुख महत्त्वपूर्ण है। जैसे हरिकेश मुनि ने भीतरी सुख का अनुभव किया। मैं स्वाधीन सुख कब प्राप्त करूँगा? वह दिन कब आएगा? इतना सुख मौजूद है किंतु हम थोड़े से सुख को सब कुछ मान रहे हैं। हम दूसरों में सुख मानते हैं, जबकि सुख स्वयं में है।''**

लाभ के साथ बढ़ता है लोभ

18 नवंबर 2024। प्रात: मंगलमय प्रार्थना में प्रभु एवं गुरु समर्पित गुणानुवाद के पश्चात् शास्त्रज्ञ आचार्य भगवन् आदि ठाणा-10 का मांडल चौराहा स्थित महावीर भवन से विहार हुआ। विहार मार्ग के दोनों ओर गुरुचरणों की अगुवाई में सैकड़ों गुरुभक्त जय-जयकारों से माहौल को भक्तिमय बना रहे थे। आचार्य भगवन् आदि संतवृंद का माण्डल गाँव में भव्य मंगल प्रवेश हुआ।

प्रवेश पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री यत्नेश मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि क्रोध, मान, माया, लोभ, दुर्गति के कारण हैं। व्यक्ति व वस्तु से आसक्ति तथा और पाने की इच्छा पतन की ओर ले जाती है। इच्छा आकाश के समान अनंत है। इच्छा का कोई अंत नहीं है। जैसे-जैसे लाभ होता है वैसे-वैसे लोभ बढ़ता जाता है। लोभ को संतोष से शांत किया जा सकता है। हमें सुदेव, सुगुरु, सुधर्म पर अटूट श्रद्धा रखनी चाहिए। भगवान ने जो कहा है वह सत्य एवं नि:शंक है। भगवान की वाणी के अनुसार आचरण करेंगे तो जीवन सफल हो जाएगा। अरिहंत हमारे देव हैं, अन्य देवी-देवताओं के चक्कर में न पड़कर सच्चे देव, गुरु, धर्म की शरण लेनी चाहिए। माह में 4 दिन रात्रिभोजन नहीं करने, प्रतिदिन 15 मिनट धर्माराधना करने का नियम कई भाई-बहिनों ने लिया। आचार्य भगवन् ने असीम कृपा करके मंगलपाठ फरमाया।

भीलवाड़ा के अमर समता भवन में बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर आदि ठाणा-4 के पावन सान्निध्य में धर्माराधना का अनुपम ठाठ लगा हुआ है। पूज्य प्रवर के जीवन निर्माणकारी ओजस्वी प्रवचन हुए। विभिन्न त्याग-प्रत्याख्यान हुए।

शासन दीपक श्री नीरज मुनि जी म.सा. एवं श्री धीरज मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-2 महुआ, बनेरा, रायला, कालियास में अपूर्व धर्म प्रभावना करते हुए गुरुचरणों में पधारे।

संतों के सान्निध्य से आचार-विचार शुद्ध होते हैं

19 नवंबर 2024। प्रात:कालीन दैनिक धार्मिक क्रियाओं के पश्चात् तरुण तपस्वी आचार्य भगवन् का अपने सान्निध्यवर्ती शिष्यों सहित विहार कर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, धुंवाला में जय-जयकार के अपूर्व उद्घोष के साथ मंगल पदार्पण हुआ। यहाँ आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री हैमगिरि मुनि जी म.सा. ने **'बच्चों आगे बढ़ते जाना, संतों की शिक्षा को भूल न जाना'** गीत के साथ फरमाया कि संत दर्शन भाग्यशाली, पुण्यवान को मिलता है। संत दर्शन से हमारे अंदर की कमजोरी दूर होती है। परोपकार, सेवा, दया, करुणा की भावना से मानव जीवन सफल होता है। गलत विचार और गलत आचार पतन के गर्त में ले जाने वाला होता है। संतों के सान्निध्य में आचार-विचार शुद्ध हो जाते हैं। सूर्योदय से पहले उठने एवं प्रतिदिन माता-पिता को प्रणाम और उनकी हर आज्ञा का पालन करने की प्रेरणा मुनिश्री ने दी।

श्री गगन मुनि जी म.सा. ने **'सत्संग से सुख मिलता है, जीवन का कण-कण खिलता है'** गीत प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि विद्यार्थी को काग चेष्टा, बको ध्यान, श्वान निद्रा, अल्प आहारी व गृहत्यागी होना चाहिए। सत्संग यानी सत्य की संगति करना। जीवन में कभी झूठ नहीं बोलना एवं अच्छे लोगों की संगति करना। सत्य साहित्य से जीवन निर्माण होता है।

श्री यत्नेश मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि अहंकार, क्रोध, प्रमाद, आलस्य करने, रोग होने से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते। सात्विक खान-पान से विचार शुद्ध होते हैं। महेश नाहटा ने कैंसर, हार्ट की बीमारी से बचने के लिए तंबाकू, गुटखा, मद्य-मांस से दूर रहने की अपील की। अनेक छात्र-छात्राओं व शिक्षकों ने व्यसनमुक्ति का संकल्प लिया। जीवन में किसी भी परिस्थिति में आत्महत्या नहीं करने और प्रतिदिन एक अच्छा कार्य करने के भी संकल्प हुए। भीम, सारोठ, विजयनगर एवं ब्यावर संघों ने गुरुचरणों में विनती प्रस्तुत की। भीलवाड़ा संघ की सेवाएँ निरंतर जारी रहीं। आचार्य भगवन् ने असीम कृपा करके मंगलपाठ श्रवण का लाभ प्रदान किया।

अमर समता भवन, भीलवाड़ा में बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर के प्रभावशाली आगमसम्मत प्रवचनों से धर्मप्रेमी जनता अभिभूत हो गई।

माता-पिता एवं गुरु के उपकारों को कभी न भूलें

20 नवंबर 2024। गाँव-गाँव, नगर-नगर में जैन धर्म के आगमों के सार से जन-जन को पावन करते हुए आचार्य भगवन् आदि ठाणा-10 का आज राजकीय प्राथमिक शाला, जीवलिया (आसींद) में जय-जयकारों के साथ मंगल प्रवेश हुआ। यहाँ पर आयोजित धर्मसभा में स्थानीय जैन-जैनेतर लोगों के साथ देश के अनेक स्थानों से पधारे गुरुभक्त सैकड़ों की संख्या में उपस्थित थे। धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री हैमगिरि मुनि जी म.सा. ने **'कर लो, कर लो, जीवन का उत्थान रे'** गीत प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि इस गाँव का अहोभाग्य है कि संस्कार क्रांति के पुरोधा आचार्य भगवन् यहाँ पधारे हैं, जिनके दर्शनमात्र से नेत्र पवित्र हो जाते हैं। जीवन पवित्र हो जाता है। इस दुनिया में सत्य की सदैव जय-जयकार होती है। हमेशा सत्य बोलें और झूठ का त्याग करें। सत्य बोलने वाले पर सभी विश्वास करते हैं। झूठे आदमी का कोई विश्वास नहीं करता। माता-पिता और गुरु के उपकारों को कभी न भूलें। उनकी हर आज्ञा, निर्देश का पालन करें। ऐसा व्यक्ति जीवन में असफल नहीं होगा। विनय सभी गुणों का मूल है। बड़ों को प्रणाम करने से आयुष्य लंबी होती है। विद्या और यशकीर्ति की गहराई में यह वृत्ति रहती है। आत्म-जागृत रहने वाला व्यक्ति अपने दोषों को देखता है। स्तुति के समय यह भाव उत्पन्न होना चाहिए कि तीर्थंकरों ने अपने दोषों पर विजय प्राप्त कर ली तो मैं भी अपने मन के विचारों पर अवश्य विजय प्राप्त करूँगा। जो अपना नेतृत्व कर सकता है वो दूसरों का भी नेतृत्व कर सकता है। बच्चों में प्रारंभ से ही धर्म के संस्कार भरने चाहिए।

कर्मफल आज नहीं तो कल निश्चित

21 नवंबर 2024। प्रभातोदय के साथ ही मंगल प्रार्थना से जीवन धन्य बनाने के पश्चात् प्रशांतमना आचार्य भगवन् आदि ठाणा-10 का राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, मोड़ का निम्बाहेड़ा में मंगल पदार्पण हुआ। आँचलिया परिवार एवं ग्रामीणों ने अगवानी की।

प्रवेश पश्चात् प्रवचन सभा को धर्मरस का पान कराते हुए श्री हैमगिरि मुनि जी म.सा. ने **'जप लो प्यारे साँझ-सवेरे माला हरि नाम की'** गीत प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि बड़े सौभाग्य से मानव जन्म मिलता है। इस मानव तन से नर से नारायण बना जा सकता है। राम की महिमा अपरंपार है। राम नाम में अपार शक्ति है, पर इसके प्रति हमारी अटूट श्रद्धा होनी चाहिए। श्रद्धा परम दुर्लभ है। श्रद्धा नहीं तो कुछ नहीं है। कर्म करते रहो, पर फल की इच्छा मत करो। हम जैसा कर्म करेंगे उसका वैसा फल निश्चित मिलेगा। अच्छे कर्म का अच्छा और बुरे कर्म का बुरा फल मिलेगा। जो मद्य-मांस का सेवन करता है, पंचेंद्रिय जीवों का वध करता है, अतिसंग्रह और आसक्ति में आकंठ डूबा

रहता है, वह नरक गति में जाता है। किसी की निंदा, बुराई नहीं करनी चाहिए अपितु सदैव अच्छाई और गुणों की ओर हमारा ध्यान रहना चाहिए।

प्रतिदिन 15 मिनट प्रभु भक्ति एवं स्वाध्याय करने, टीवी, मोबाइल का कम से कम उपयोग करने तथा व्यसनमुक्ति के संकल्प हुए। आचार्य भगवन् ने कृपा वर्षण करते हुए मंगलपाठ फरमाया।

आदिनाथ भवन, कांचीपुरम (भीलवाड़ा) में बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर ने अपनी ओजस्वी वाणी में फरमाया कि **''गुरु के वचन प्रसाद रूप हैं। विद्या, शक्ति-संपन्न कब बनती है? शब्दों में ताकत कब आती है? जब गुरुमुख से निकलती है। बहुत फर्क होता है गुरुमुख से निकलने और पुस्तक से पढ़ने में। शब्द भले ही वे ही हों। भगवान महावीर ने गणधरों के माध्यम से द्वादशांगी का प्रवाह किया, इसे गणिपिटक कहते हैं। देवानुप्रिय! यह अच्छा शब्द है। छोटा, बड़े को कहे और बड़ा, छोटे को कहे तो दोनों ओर से स्वीकार किया जाता है। सारे स्वरों में मेघगर्जना सर्वश्रेष्ठ है। भेरी की आवाज पूरी द्वारिका में जाती थी। कोई प्रधान कार्य होता तो उसको बजाते। कौटुम्बिक पुरुष प्रसन्न होकर मस्तक पर हाथ जोड़कर 'तहत्ति – जैसा कहा वैसा ही करते हैं' कहते हुए उपस्थित हो जाते। तीर्थंकर देवों के वचन हमारे आध्यात्मिक जीवन का विकास करने वाले होते हैं।''** उपाध्याय प्रवर ने प्रतिदिन 5 बार देवानुप्रिय शब्द का प्रयोग करने का प्रत्याख्यान कराया। अन्य अनेक त्याग-प्रत्याख्यान हुए।

विवेक विचार से बोलना चाहिए

22 नवंबर, 2024। परमागम रहस्यज्ञाता आचार्य भगवन् आदि ठाणा का प्रात:कालीन दैनंदिनी के पश्चात् अनेकानेक जय-जयकारों के साथ अंबेश भवन, करजालिया में मंगल पर्दापण हुआ। प्रवेश पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री राजन मुनि जी म.सा. ने **'आया कहाँ से कहाँ है जाना'** गीतिका के साथ फरमाया कि व्यक्ति में इतनी समझ होनी चाहिए कि वह क्या कह रहा है। विवेक विचार से बोलना चाहिए। हम यह न सोचें कि लोग क्या कहेंगे। बिना सोचे बोलने से कभी-कभी अनर्थ हो जाता है। कभी भी किसी को भी यह नहीं कहना चाहिए कि तुम यह नहीं कर सकते। इसका मनोवैज्ञानिक असर पड़ता है। आप किसी को 100 बार मूर्ख कहते हैं तो वह शनै:-शनै: मूर्खता करने लग जाता है। किसी को हतोत्साहित नहीं करना चाहिए। लोक व्यवहार में कुशलता होनी चाहिए। जैसे दोस्तों के साथ बोलते हैं वैसा दूसरों के साथ बोलेंगे क्या? विवेक विचार से बोलें। लोग क्या कहेंगे, यह सोचकर कोई कार्य न करें। एक व्यक्ति स्टीमर बनाने की कोशिश करता है। लोग कहते हैं कि तुम स्टीमर नहीं बना सकते। इतना समय खराब कर दिया, इतने समय में तो नाव चलाकर पैसा कमा लेता। बेकार में समय नष्ट किया। उसने बात नहीं सुनी और कोशिश करते-करते स्टीमर का आविष्कार कर लिया।

आचार्य भगवन् के आह्वान पर गाँव में रहते हुए धर्मस्थानक में प्रतिदिन एक बार आने का नियम कई भाई-बहनों ने लिया। करजालिया से गिट्टी, कंकर, कच्चे मार्ग के परीषहों को सहन करते हुए आचार्य भगवन् आदि ठाणा का दोपहर में विहार कर पुवलिया स्कूल पधारना हुआ। निवर्तमान राष्ट्रीय अध्यक्ष जी सहित विभिन्न स्थानों से आगत भाई-बहनों ने गुरुदर्शन सेवा का लाभ लिया।

आदिनाथ भवन, कांचीपुरम (भीलवाड़ा) में बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर का प्रभावी प्रेरक प्रवचन निरंतर जारी है। मेवाड़ के विभिन्न क्षेत्रों को पावन करते हुए शासन दीपक श्री हर्षित मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-8 का महावीर भवन, विजयनगर में प्रभावी प्रवचन जारी है।

जैसी करनी, वैसी भरनी

23 नवंबर, 2024। युगनिर्माता आचार्य भगवन् एवं शिष्य मंडली का जैन-जैनेतर जनों की अगवानी में अपूर्व जयघोषों के साथ अंबेश भवन, कालियास में मंगलमय प्रवेश हुआ। धर्मसभा में उपस्थित जनमेदिनी को भगवान महावीर की अमृतवाणी से पावन करते हुए श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि हम दूसरों को साता पहुँचाएँगे तो हमें भी साता मिलेगी। यदि दूसरों को असाता पहुँचाएँगे तो हमें भी असाता मिलेगी। जैसी करनी, वैसी भरनी। कर भला तो हो भला। आचार्य भगवन् पधारे हैं, जिनके संयम, चलने, उठने, बैठने व मौन में समाधि है। ऐसे महान त्यागी महापुरुष का सान्निध्य पाकर अपने आपको जागृत करें। श्रेष्ठ आचार व विचार को आत्मसात् करें। सभी जीवों के साथ हमारा मैत्रीभाव हो। हमारे जीने का उद्देश्य शांति व समाधि प्राप्त करना है। समाधि में आने से अपने विचारों में बदलाव आ जाते हैं। हमें समाधि के महान पुंज से प्रेरणा लेनी चाहिए।

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि पुण्य नौ प्रकार के होते हैं। ऐसे वचनों का हम प्रयोग करें जिनसे किसी को पीड़ा नहीं पहुँचे। ध्यान, जाप व स्वाध्याय में अपने समय का सदुपयोग करें। जब तक गुरुदेव कालियास से नहीं पधारें, तब तक एक चीज का त्याग करें। महिला मंडल ने **'जिनशासन के वीरों को वंदन है, अभिनंदन है'** गीत प्रस्तुत किया।

वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, कालियास के प्रमुख ने आचार्य भगवन् के आगमन पर हर्ष व्यक्त किया। 26 वर्ष बाद आचार्य भगवन् का पुनरागमन हो रहा है। इससे पूरे गाँव व संघ में खुशी का वातावरण छा गया। वर्षभर में एकासन और पौरसी, उपवास के प्रत्याख्यान हुए। गाड़ी चलाते व भोजन करते समय मोबाइल का प्रयोग नहीं करने का प्रत्याख्यान अनेक जनों ने लिया। राजस्थान सरकार के पूर्व मुख्य सचिव निरेंन जी आर्य, शिखर सदस्यगण, निवर्तमान राष्ट्रीय अध्यक्ष जी, युवा संघ के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष, समता प्रचार संघ के संयोजक सहित अनेक ग्रामीण भाई-बहनों ने गुरुदर्शन सेवा का लाभ लिया।

दोपहर में श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने प्रश्नोत्तरी, जिज्ञासा-समाधान कार्यक्रम में मार्गदर्शन प्रदान किया। आचार्य भगवन् के मुखारविंद से सरदार हरजीत सिंह हुड्डा, ब्यावर ने आजीवन पान, गुटखा, शराब, माँस, अंडा नहीं खाने का प्रत्याख्यान लिया। आचार्य भगवन् ने कृपा कर मंगलपाठ प्रदान किया।

आदिनाथ भवन, कांचीपुरम (भीलवाड़ा) में श्रद्धेय उपाध्याय प्रवर की ओजस्वी धर्मदेशना से धर्मप्रेमी जनता आत्मतृप्त हो रही है।

लगनपूर्वक स्वाध्याय में लगे रहो

24 नवंबर, 2024, मोतीपुर। प्रात: रविवारीय समता शाखा में समता आराधना करते हुए लोगों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। तत्पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि एक बहाने की तलाश होती है जाने वाले को भी और निभाने वाले को भी। वेद सबसे प्राचीन ग्रंथ हैं। दुनिया के सभी धर्मग्रंथ 14 पूर्व के ज्ञान में समाहित हैं। भूत, भविष्य, ज्योतिष, संगीत, अध्यात्म, घर, परिवार, व्यापार, विज्ञान, भूगोल आदि सभी ज्ञान 14 पूर्व के ज्ञान में सम्मिलित हैं। जैन दर्शन ने अनेकांत से सभी का समाधान कर दिया। जैनियों की गीता उत्तराध्ययन सूत्र है। 32 आगमों में से एक सूत्र की विविध नयों से व्याख्या हो जाती है। अमरकोष में सभी शब्दों के पर्यायवाची हैं। नाना गुरु ने अमरकोष पढ़ा, याद किया। बहुत रुचि से हर क्षेत्र को पढ़ा व

समझा। पहले ज्ञान उत्पन्न करो, भटकने के बहुत स्थान हैं। पहले दशवैकालिक, उत्तराध्ययन पढ़ो, फिर दूसरा ज्ञान करना हो तो आचार्यश्री से अनुमति लेकर करें। मेरे से अब यह नहीं होगा, यह मानसिक अवरोध है। पुराना याद नहीं होता है, उसको तोड़-तोड़कर देखो, याद करो, सीखो, कुछ कंठस्थ करो। जिस चीज को जिंदगी में बढ़ाना चाहते हो, उसको समय दो। लगनपूर्वक उसमें लगे रहो। प्रतिदिन आगमों का अध्ययन, स्वाध्याय का क्रम चतुर्विध संघ में प्रारंभ करने हेतु महापुरुषों की जो प्रेरणा हमें मिल रही है, उसमें श्रद्धा व समर्पित भाव के साथ यथाशक्ति स्वाध्याय अवश्य करें।

समता युवा संघ के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष ने कहा कि हमारे पूर्वजों का गाँव मोतीपुर है। आचार्य श्री नानेश के बाद आराध्यदेव वर्तमान आचार्य भगवन् का आगमन हुआ है। यह हमारे लिए अनन्य पुण्यवानी का फल है।

समता प्रचार संघ के संयोजक ने कहा कि हे भगवन्! राम शासन में आप हमको निभा रहे हैं। मैं अमीर हूँ तो गरीब को निभाऊँ, मैं पूर्ण ज्ञानवान हूँ तो कम ज्ञानवान को निभाऊँ। मैं सभी को निभाऊँ, ऐसा चिंतन करता हूँ। आँचलिया परिवार की बेटियों ने **'गुरु अलमस्त रहें, स्वस्थ रहें'** गीत प्रस्तुत किया।

प्रतिदिन व सप्ताह में आधा घंटा आगम गाथा का स्वाध्याय करने का नियम कई भाई-बहिनों ने लिया। बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर के सान्निध्य में आदिनाथ भवन, कांचीपुरम में धर्म प्रभावना निरंतर जारी है।

शरीर बीमार होने पर भी धर्म नहीं छूटना चाहिए

25 नवंबर, 2024, बरसनी गाँव। युगनिर्माता आचार्य भगवन् का जय-जयकारों के साथ ओम जी कालिया के निवास में पधारना हुआ। प्रवेश के पश्चात् विहार यात्रा धर्मसभा में परिवर्तित हो गई। इस धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने **'आया कहाँ से, कहाँ है जाना'** गीत के साथ फरमाया कि हमें संसार रूपी कीचड़ में फँसे हुए नहीं रहना। अभी तो हमें हमारे भीतर अध्यात्म की ज्योत जलानी है। संसार में सार नहीं, लेकिन संसार का सार संयम है। उस दिशा में आगे कदम बढ़ाना है। किसी का सहयोग न होने पर अपने भीतर की शक्तियाँ पूर्ण रूप से प्रकट होती है। अच्छे सहयोगी की अपेक्षा हमारी आत्मशक्ति को कमजोर करती है। भगवान महावीर का जीवन बिना सहयोग की साधना का एक अनुपम उदाहरण है। हमारी भावना यह रहनी चाहिए कि हमारा ध्यान न रखा जाए। दूसरों का विशेष ध्यान रखा जाए, क्योंकि हम तो वैसे ही प्रसन्न रहने वाले हैं। हम सोचते हैं कि शरीर स्वस्थ नहीं रहे तो मन समाधि में नहीं रहेगा। समाधि का संबंध आत्मा से है, शरीर से नहीं। शरीर की स्वस्थता साधना में अधिक बल देती है। सनत् कुमार चक्रवर्ती इसके उदाहरण हैं। शरीर बीमार होने पर भी धर्म, क्रिया, साधना नहीं छूटनी चाहिए।

समता महिला मंडल, ब्यावर ने **'संयम के भाव आज जगे'** एवं **'गुरु स्वस्थ रहें, अलमस्त रहें'** गीत प्रस्तुत किया। एक घंटा मौन एवं जिनकी जितनी उम्र है, उतने नवकार मंत्र गिनने का नियम कई भाई-बहनों ने लिया। मुमुक्षु बहन श्रद्धा जी सुपुत्री धर्मेंद्र जी आंचलिया (पूर्व राष्ट्रीय महामंत्री) ने गुरुदर्शन सेवा का लाभ लिया। ग्रामीणों में व्यसनमुक्ति के संकल्प भी हुए।

बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-4 का बापूनगर, पुर रोड, भीलवाड़ा में अनिल जी मारू के निवास पर मंगल पदार्पण हुआ। अपूर्व धर्मजागरणा, धर्मदेशना निरंतर जारी है।

अपने जीवन को नैतिकता से जोड़ें

26 नवंबर, 2024। जयनगर, तहसील आसींद (जिला भीलवाड़ा) में विश्ववंदनीय आचार्य भगवन् आदि ठाणा-8 का **'भले पधारो आगमज्ञाता, हम सब पूछें सुख और साता'**, **'संयम इनका सख्त है, तभी तो लाखों**

भक्त हैं', 'नाना गुरु ने क्या दिया, राम दिया भी भई राम दिया' आदि गगनभेदी जयघोषों के साथ समता भवन में भव्य मंगल प्रवेश हुआ। अगवानी में स्थानीय एवं आस-पास के अनेक स्थानों से पधारे गुरुभक्तों की अपार उपस्थिति हर्षित करने वाली थी।

राजकीय स्कूल में आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि पहले के लोगों में और आज के लोगों में बहुत फर्क आ गया है। ज्यों-ज्यों सुविधाएँ बढ़ती जा रही हैं, लोग उतने ही ज्यादा दु:खी होते जा रहे हैं। कल हमारी संस्कृति कैसी थी और आज कैसी हो रही है! पहले महापुरुषों के आगे हिंसक से हिंसक जीव, जानवर भी शांत हो जाते थे, क्योंकि उन्हें मालूम था कि वहाँ शरण लेने से शांत हो जाएँगे। आज सरकार अपना राजस्व बढ़ाने के लिए शराब, मांस आदि को बढ़ावा देकर अपना खजाना भर रही है। उस समय के राजाओं में नैतिकता होती थी। भारत सोने की चिड़िया कहलाता था। हमें अपने जीवन को नैतिकता से जोड़ना होगा। पुरानी सभ्यता को अपनाना होगा, क्योंकि हमें महान भारतीय संस्कृति मिली है। इस संस्कृति के गौरव को अक्षुण्ण रखना होगा। खुलेआम शराब, माँस की बिक्री पर रोक लगाने हेतु सार्थक प्रयास अत्यंत जरूरी है।

स्थानीय संघ प्रमुख ने कहा कि अनंत पुण्यवानी से हमारे गाँव में आराध्यदेव का पर्दापण हुआ है। आपश्री जी अधिक से अधिक विराजने की कृपा करावें। निवर्तमान राष्ट्रीय अध्यक्षजी ने कहा कि आज परम सौभाग्योदय से भगवान महावीर की पाट परंपरा के 82वें पट्टधर गुरु राम पधारे हैं। आप महापुरुष जिनशासन की अद्भुत दलाली कर रहे हैं।

महेश नाहटा ने आचार्य भगवन् के अतिशय का जिक्र करते हुए स्वाध्याय व तप-जप से जुड़ने की अपील की। स्कूली बच्चों एवं ग्रामीणों ने व्यसनमुक्ति का संकल्प लिया। आचार्य भगवन् के मुखारविंद से नोखा मंडी निवासी तपस्विनी हेमलता जी बाँठिया ने आज 153 उपवास पर 156 उपवास के प्रत्याख्यान ग्रहण किए। आचार्य भगवन् ने कृपा बरसाते हुए मुमुक्षु बहन हर्षाली जी कोठारी, ब्यावर की दीक्षा 3 दिसंबर को सुखे-समाधे ब्यावर या के.डी. स्कूल, ब्यावर में करने की स्वीकृति प्रदान की। पूरा माहौल हर्ष-हर्ष, जय-जयकारों से गुंजायमान हो गया। मुमुक्षु बहन हर्षाली जी कोठारी ने गुरुदर्शन सेवा का लाभ लिया।

जयनगर साधुमार्गी जैन संघ एवं महिला मंडल ने **'गुरु स्वस्थ रहे अलमस्त रहे'** गीतिका प्रस्तुत की। विभिन्न त्याग-प्रत्याख्यान हुए। संपूर्ण जयनगर का माहौल राममय हो गया। हर जाति-वर्ग के लोगों ने गुरुदर्शन का लाभ लिया। दोपहर में श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने **'आया कहाँ से, जाना कहाँ है'** गीतिका के साथ धर्मसभा को संबोधित करते हुए फरमाया कि अब तक हमने क्या अच्छे कार्य किए हैं और क्या करने बाकी हैं? आत्मचिंतन करें।

तपस्विनी हेमलता जी बाँठिया का साधुमार्गी जैन श्रावक संघ, जयनगर द्वारा आत्मीय बहुमान किया गया।

बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर आदि ठाणा-4 का भीलवाड़ा से विहार कर पुर गाँव में पधारना हुआ। धर्म-ध्यान, व्याख्यान, तप-त्याग का ठाठ लग गया। महापुरुषों के आगमन से धर्मप्रेमी जनता हर्षित और पुलकित नजर आई।

सेवा, परोपकार, सहयोग से मनुष्य जन्म सफल करें

27 नवंबर, 2024, आकड़सादा। साधना के शिखर पुरुष आचार्य भगवन् आदि ठाणा-8 का आकड़सादा जैन स्थानक भवन, जिला ब्यावर में गुरुभक्तों की अगवानी व भगवान महावीर एवं आचार्य भगवन् के संयमी जीवन

के जय-जयकारों के साथ मंगल पदार्पण हुआ।

विहार यात्रा में शामिल गुरुभक्तों ने मंगल प्रवेश पश्चात् धर्मसभा का लाभ लिया। भक्तों को संबोधित करते हुए श्री हैमगिरि मुनि जी म.सा. ने **'सत्संग का लाभ उठा लेना'** गीत प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि धर्म मंगल है। अहिंसा, संयम, तप धर्म के लक्षण हैं। जिनका मन सदा धर्म में लगा रहता है, उन्हें मानव क्या, देवता भी नमस्कार करते हैं। नवकार महामंत्र की जो आराधना करता है, उसका बेड़ा पार हो जाता है। नवकार महामंत्र व्यक्तिपूजक न होकर गुणपूजक है। इसके माध्यम से सभी महापुरुषों को वंदन-नमन किया गया है। इधर-उधर की व्यर्थ की बातों में न पड़ सदैव नवकार महामंत्र का स्मरण करते रहना चाहिए। यह मनुष्य जन्म अत्यंत दुर्लभता से प्राप्त हुआ है। सेवा, परोपकार, सहयोग की भावना से जीवन को सफल बनाना है। सत्संग से जीवन में बदलाव आता है। सदैव अच्छे कर्म करते रहें क्योंकि जैसा हम कर्म करेंगे वैसा फल हमें निश्चित रूप से प्राप्त होगा। व्यसनमुक्ति के प्रत्याख्यान हुए। संघ के निवर्तमान राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं पूर्व राष्ट्रीय महामंत्री सहित विभिन्न स्थानों से पधारे श्रद्धालु भाई-बहनों ने गुरुदर्शन-सेवा का लाभ लिया।

शासन दीपिका साध्वी श्री समिहा श्री जी म.सा. आदि ठाणा गुरुदर्शन कर अभिभूत हो गए।

'थारो गाँव सुहाणो लागै' व्यसनमुक्त समाज

गोपालपुरा। आचार्य भगवन् का जयनगर से अपने सान्निध्यवर्ती संतरत्नों सहित विहार कर गोपालपुरा धर्मनगरी के सामुदायिक भवन में जय-जयकारों के साथ मंगल पदार्पण हुआ। धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि महान क्रांतिकारी युगपुरुष जवाहराचार्य ने अपने गोपालपुरा प्रवास के बाद इस गाँव के लिए **'थारो गाँव सुहाणो लागै'** शब्द उच्चारित किए तथा वैसी ही कृपा आज तक बनी हुई है कि इस गाँव में कोई आपदा नहीं आई और यहाँ के सभी ग्रामवासी बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक मद्य, मांस, तंबाकू, गुटखा, बीड़ी, सिगरेट, जुआ, चोरी आदि से कोसों दूर हैं। गाँव खुशहाल हो गया। गुर्जर समाज आबाद हो गया। आज नानेश पट्टधर राम गुरु के आगमन पर अपने आराध्यदेव को अपने बीच पाकर सभी हर्षित एवं पुलकित हो गए। विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से मुनिश्री ने सदैव अच्छे कार्य में लगे रहने की प्रेरणा दी। विभिन्न शुभ संकल्प हुए। ग्रामवासियों की सेवाभक्ति अत्यंत सराहनीय रही।

अच्छे लोगों की संगति करें

28 नवंबर, 2024, लक्ष्मीपुरा कोटड़ा। सामाजिक उत्क्रांति के प्रणेता परम श्रद्धेय आचार्य भगवन् आदि ठाणा का गोपालपुरा से विहार प्रारंभ हुआ। मार्ग में जैन-जैनेतर जन गुरुदर्शनों का लाभ लेते हुए जय-जयकारों से माहौल को भक्तिमय बना रहे थे। आपश्री जी का लक्ष्मीपुरा कोटड़ा (ब्यावर) के राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय में मंगल पदार्पण हुआ।

प्रवेश पश्चात् धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री गगन मुनि जी म.सा. ने **'सत्संग से सुख मिलता है, जीवन का कण-कण खिलता है'** गीत के साथ फरमाया कि सत्संग यानी अच्छे लोगों की संगति करना, सत्य की संगति करना। जिसके जीवन में सच्चाई, ईमानदारी, नैतिकता, नीति, न्याय हों, ऐसे लोगों की संगति करना। शराबी, जुआरी की संगति करेंगे तो वैसे ही बन जाएँगे। दुनिया में अच्छे-बुरे दोनों हैं, लेकिन हमें अच्छे कार्य की ओर ध्यान

देना है। हमारी तरफ से किसी भी जीव को कष्ट नहीं हो, ऐसा प्रयास करना है। अच्छाई की ओर हम देखेंगे तो हम भी एक दिन महान बन जाएँगे। जैन साधु के आचार-विचार पर विस्तृत रूप से आपश्री ने प्रकाश डाला।

व्यसनमुक्ति के संकल्प हुए। प्रतिदिन एक अच्छा कार्य करने का संकल्प कई भाई-बहनों, छात्र-छात्राओं ने लिया। विभिन्न स्थानों के श्रद्धालु भाई-बहनों ने गुरुदर्शन का लाभ लिया। आचार्य भगवन् ने असीम कृपा कर मंगलपाठ फरमाया। ब्यावर संघ के वरिष्ठ उपाध्यक्ष ने संस्कार निर्माण पर जोर दिया।

कठिनाई से घबराना नहीं, मुकाबला करना है

29 नवंबर, 2024, हीरा का बाड़िया। विश्ववंदनीय आचार्य भगवन् आदि ठाणा का ब्यावर के हीरा का बाड़िया क्षेत्र की महात्मा गांधी राजकीय स्कूल में जयनादों के साथ मंगलमय पर्दापण हुआ। पदार्पण पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि हिम्मत से सब कार्य संपन्न होते हैं। हर परिस्थिति में हिम्मत व साहस व्यक्ति को आत्मबल प्रदान करते हैं। निराशा व हताशा जीवन के शब्दकोष में नहीं होने चाहिए। कठिनाई से कभी घबराना नहीं चाहिए, अपितु कठिनाई का डटकर सामना करना चाहिए। हिम्मतवान की ईश्वर भी मदद करते हैं।

विभिन्न शुभ संकल्प हुए। आचार्य भगवन् ने असीम कृपा करके मंगलपाठ प्रदान किया।

मुमुक्षु हर्षाली जी कोठारी का भव्य वरघोड़ा व अभिनंदन

स्वागत के लिए उमड़ा जनसैलाब

ब्यावर। **'आत्मा की आवाज संयम है'** इसी उक्ति को आत्मसात कर 3 दिसंबर 2024 को युगनिर्माता आचार्य श्री रामेश के मुखारविंद से जैन भागवती दीक्षा ग्रहण करने जा रही अध्यात्म-पथ साधिका, वीरबाला मुमुक्षु हर्षाली जी कोठारी सुपुत्री अशोक जी-ऊषा जी कोठारी, ब्यावर निवासी का भव्य वरघोड़ा एवं शानदार आत्मीय अभिनंदन श्री साधुमार्गी जैन संघ, समता महिला मंडल, समता युवा संघ, बहू मंडल, सकल जैन समाज, ब्यावर सहित अनेक संस्थाओं द्वारा एक भव्य समारोह में किया गया।

मुमुक्षु बहन हर्षाली जी कोठारी ने अपने भावोद्‌गार में कहा कि महान, अलौकिक महापुरुष आचार्य भगवन् एवं उपाध्याय प्रवर की कृपा से मैंने अपने जीवन का एक लक्ष्य बनाया कि मुझे संसार की मोह-माया और उलझन में नहीं फँसना, केवल संयम मार्ग पर आगे बढ़ना है। इसके लिए परिवारजनों का मुझे पूर्ण सहयोग मिला है। उनके उपकारों को कभी नहीं भूल सकती। सबसे श्रेष्ठ मार्ग यदि कोई है तो संयम मार्ग है। आप सभी अपनी संतानों को इस विशिष्ट मार्ग की ओर अग्रसर करें। ब्यावर संघ की भी मैं कृतज्ञ हूँ।

वीर मामा श्री रिखबचंद जी सोनी (केकड़ी), वीणा जी नाहर, अंजली जी बाबेल, वीर माता चंदा देवी गुलगुलिया (पुणे) ने दीक्षार्थी बहन के उज्ज्वल संयम जीवन की कामना करते हुए संयम गीत प्रस्तुत किया। अन्य कई भाई-बहनों ने भावाभिव्यक्ति दी। महेश नाहटा ने मुमुक्षु बहन का आत्मीय परिचय दिया।

मुमुक्षु बहन हर्षाली जी कोठारी एवं परिजनों का भावभीना अभिनंदन श्री अ.भा.सा. जैन संघ के जयपुर-ब्यावर अंचल, स्थानीय साधुमार्गी जैन संघ, महिला मंडल, समता युवा संघ, बहू मंडल सहित अनेकानेक संस्थाओं

के पदाधिकारियों ने शॉल, माला, अभिनंदन-पत्र प्रदान कर किया। इनके अलावा वीर संघ, जयमल जैन श्रावक संघ, जीतो, जैन दिवाकर संघ, गौशाला, किशनगढ़ स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, खरवा संघ, अजमेर वर्द्धमान स्थानकवासी जैन संघ, जैन सोशल ग्रुप, लोकाशाह जैन संघ आदि कई संघों व संस्थाओं ने मुमुक्षु बहन का बहुमान किया। संघ मंत्री ने आभार अभिव्यक्त किया।

मुमुक्षु बहन का भव्य वरघोड़ा अशोक जी कोठारी के निवास स्थान से सिटी डिस्पेंसरी, तेलियान चौपड़, पाँच बत्ती, मालियान चौपड़ आदि मार्गों से होते हुए समता भवन पहुँचा। मार्ग में अनेक स्थानों पर मुमुक्षु बहन का स्वागत हुआ। मुमुक्षु बहन व परिजन आकर्षक रथ में सवार थे तथा सभी का अभिवादन स्वीकार कर रहे थे। जय-जयकारों व मंगल गीतों से पूरा माहौल गूँज रहा था।

समता भवन में श्री छत्रांक मुनि जी म.सा., श्री राजन मुनि जी म.सा., श्री यत्लेश मुनि जी म.सा., साध्वी श्री पराग श्री जी म.सा. ने संयम का महत्त्व बताते हुए फरमाया कि संसार में सच्चा सुख नहीं अपितु सच्चा सुख तो अध्यात्म और संयम में है। हमें भी आत्मगुणों को जागृत करना है।

अनादिकाल के दु:खों को मिटाने हेतु 48 मिनट ही बहुत

30 नवंबर, 2024, पिपली का बाड़िया। संयम सुमेरु, युगनिर्माता आचार्य भगवन् आदि ठाणा-4 का पिपली का बाड़िया में किशन सिंह जी भंवर सिंह जी रावत के निवास पर जय-जयकारों के साथ मंगल पदार्पण हुआ। मंगल प्रवेश पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने **'आया कहाँ से, कहाँ से जाना'** गीत के पश्चात् फरमाया कि अनादिकाल के दु:ख को मिटाने के लिए 48 मिनट भी बहुत हैं। अपने दु:ख को मिटाने की ताकत हमारे भीतर है। अगर कोई हमें दु:खी बना सकता है तो वह सिर्फ हम ही हैं। सुख प्राप्ति के 5 कारण हैं- (1) मेरे लिए सब अच्छे हैं, (2) मुझे सबका हित करना है, (3) हर समस्या का समाधान है, (4) अतीत का तनाव मत लो तथा (5) न मैं किसी से कम हूँ और न मैं किसी से ज्यादा। जिसमें मदद करने की भावना है, वह दुनिया में कहीं भी चला जाए तो भी सफल हो जाएगा। हम जो सोचते हैं, जो चाहते हैं वैसा ही कार्य यदि करते हैं तो सफल होने में देरी नहीं होगी और हमारी काम करने क्षमता बढ़ेगी। जो बात पुरानी हो गई उसको पकड़कर नहीं बैठना चाहिए। पुरानी बातों को भूल जाना चाहिए। दूसरों की बढ़ती को देखकर उसकी तुलना करने की आदत न डालें।

परम गुरुभक्त हुलासमल जी सुराणा (देशनोक) के निधन पर परिजनों ने गुरुचरणों में उपस्थित होकर आध्यात्मिक शांति व संदेश प्राप्त किया। आराध्यदेव आचार्य भगवन् ने अपने भावोद्‌गार में फरमाया कि **''हुलासमल जी सुराणा का मेरे पर भी उपकार रहा है। स्कूल के समय उन्होंने बहुत मदद की। उन्होंने मुझे सही रास्ता दिखाया। जन्म लेने वाला जाएगा ही, पर उनके गुणों को अपनाएँ।''**

प्रतिदिन 15 मिनट स्वाध्याय करने का नियम परिजनों ने लिया। अनेक बालक-बालिकाओं ने 1 माह, 3 माह मोबाइल का त्याग ग्रहण किया। अन्य कई त्याग-प्रत्याख्यान हुए। आचार्य भगवन् ने असीम कृपा कर मंगलपाठ श्रवण कराया।

आचार्य भगवन् का 3 दिसंबर को मुमुक्षु हर्षाली जी कोठारी की जैन भागवती दीक्षा के पावन प्रसंग पर ब्यावर पधारना संभावित है। ब्यावर नगर एवं आसपास के उपनगरों में अपूर्व उत्साह एवं धर्म का वातावरण बना हुआ है।

तपस्या सूची

संत–सती वर्ग	
श्री हैमगिरि मुनि म.सा.	5 उपवास
श्रावक–श्राविका वर्ग	
आजीवन शीलव्रत	रमेश जी चिप्पड़–राखोल्या, राजेंद्र जी चौपड़ा–भीलवाड़ा, लालचंद जी रांका, अरुणा जी हंसमुख जी बंबकी–दापोली, मांगीलाल जी देऊ बाई डूंगरवाल, घेवरचंद जी लहरी देवी कुकड़ा–मोतीपुर, मदनलाल जी मांगी बाई दर्जी–कालियास, रामसुख जी शर्मा–बरसरी, घेवरचंद जी संचेती–आकड़सादा, जयचंदलाल जी सरला देवी मरोटी–देशनोक, **गोपालपुरा से–** भागीरथ जी गुर्जर, दयाराम जी गुर्जर, अवतार जी गुर्जर, रायमल जी गुर्जर, नथमल जी मंजू देवी सुराणा–देशनोक
गाथा का स्वाध्याय	**1 लाख –** लक्ष्मी जी श्रीश्रीमाल–कवर्धा, वीणा जी बोथरा–दुर्ग
पौरसी	**आजीवन –** कोकिला जी सांखला–दुर्ग
	100 – ताराचंद जी रांका–आसींद (1100 सामायिक व 150 प्रतिक्रमण भी)
पक्की नवकारसी	**एक वर्ष –** किरण देवी सेठिया
	250 – तारा देवी सेठिया–गंगाशहर
लोगस्स	**12 हजार –** सुभाष जी भूरा–देशनोक
मासखमण	कुसुम जी नागौरी–भीलवाड़ा

अन्य कई गुप्त तपस्याएँ जारी...

-महेश नाहटा

अपनी कठिन साधना के फलीभूत होने पर भगवान महावीर ने केवलज्ञान प्राप्त किया। इस ज्ञान में तीनों काल एवं तीनों लोक को हाथ में रखे आँवले की तरह देखने का सामर्थ्य समुत्पन्न हो जाता है। ऐसे अरिहंत प्रभु यह भी देख लेते हैं कि सिद्ध भगवान कैसी अनंत एवं अलौकिक शांति में रमण कर रहे हैं तथा वे संपूर्ण लोकालोक को किस दृष्टि से देख रहे हैं। सिद्धों और अरिहंतों के केवलज्ञान में कोई अंतर नहीं होता। समग्र संसार में क्या हो रहा है, अनंत परमाणुओं में परिवर्तन किस रूप में घटित हो रहा है तथा चेतना–शक्ति से कैसे–कैसे कार्य संपादित किए जा सकते हैं, यह सब उन परमज्ञानी आत्माओं ने देखा तथा वैसी आत्माएँ एवं सिद्धात्माएँ आज भी देख रही हैं और अनंतकाल तक देखती रहेंगी। यह सर्वोच्च ज्ञान का अमर प्रकाश होता है।

प्रभु महावीर के दिव्य अनुभवों का सार प्राप्त करने की अभिलाषा से जब गौतम गणधर ने प्रभु से अनेक प्रश्न पूछे, तब अपने जीवन के अंतिम समय में उन्होंने उत्तराध्ययन सूत्र का उच्चारण किया। उसमें उन्होंने जिन जीवन रहस्यों, आदर्श सिद्धांतों तथा परमज्ञान की परतों का उद्‌घाटन किया है, वह उन जैसे अतिविशिष्ट महापुरुष ही कर सकते हैं। उन पर जितनी गहराई से चिंतन किया जाएगा, उतनी ही स्पष्ट अनुभूतियों के जागृत होने का प्रसंग उपस्थित होगा। प्रत्येक विवेकशील प्राणी का अधिकार और कर्तव्य है कि वह उन पर चिंतन–मनन करें, उन्हें अपने आचरण में उतारें तथा प्रदर्शित मार्ग पर अपने चरण बढ़ावें। वर्तमान जीवन के पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक वक्ता और श्रोता प्रभु महावीर की उपदेश धारा को आत्मसात करने का सतत प्रयास करें।

– परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

रचनाएँ आमंत्रित

आप संघ के मुखपत्र के नियमित पाठक हैं यह हमारे लिए हर्ष का विषय है। श्रमणोपासक के प्रत्येक माह के धार्मिक अंक विभिन्न विषयों पर आधारित होते हैं। विशिष्ट पाठकों, लेखकों व अन्य जनों के लिए श्रमणोपासक गुरु गुणानुवाद का विशेष अवसर उपस्थित कर रहा है। श्रमणोपासक के **अक्टूबर 2024 धार्मिक अंक** से **मार्च 2025 धार्मिक अंक** तक के सभी प्रकाशन **आचार्य भगवन् के गुणों, विशेषताओं, साधना व संयमी जीवन, संघ के प्रति आचार्य भगवन् का चिंतन, संघ समर्पणा क्यों आवश्यक, महत्तम आरोग्यम्** पर आधारित रहेंगे। उपर्युक्त विषयों पर आधारित रचनाएँ आप सभी से सादर आमंत्रित हैं। चूँकि महत्तम शिखर वर्ष गतिमान है, अतः हम सभी को महत्तम महापुरुष के गुणों का बखान कर कर्मनिर्जरा करने एवं उन गुणों को आत्मसात करने का अपूर्व अवसर उपलब्ध हुआ है। हम सभी अपने गुरु के गुणानुवाद कर इस अवसर का लाभ उठावें।

सम्माननीय पाठकगण अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र भिजवाने का लक्ष्य रखें। इन विषयों पर आलेख के साथ-साथ आप अपने अनुभव एवं संस्मरण भी भिजवा सकते हैं। यदि आपके पास श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ द्वारा साधुमार्गी परिवारों को जारी M.I.D. (ग्लोबल कार्ड) नं. हो तो उसका उल्लेख अवश्य ही करें। प्राप्त मौलिक एवं सारगर्भित रचनाओं को समाहित करने का लक्ष्य रहेगा। विषय संदर्भित आपकी रचनाएँ – लेख, कविता, भजन, कहानी आदि हिंदी व अंग्रेजी में सादर आमंत्रित हैं।

उपर्युक्त विषयों के अतिरिक्त अन्य विषयों पर भी आपकी रचनाएँ, संस्मरण, कविताएँ, लेख, कहानियाँ या अन्य कोई ऐसी विषयवस्तु जो सर्वजन हिताय प्रकाशित की जा सकती हो, तो इन रचनाओं का भी सहर्ष स्वागत है। आप अपनी रचनाएँ दिए गए मोबाइल व वॉट्सएप्प नंबर या ईमेल द्वारा भी भेज सकते हैं।

-श्रमणोपासक टीम

9314055390

news@sadhumargi.com

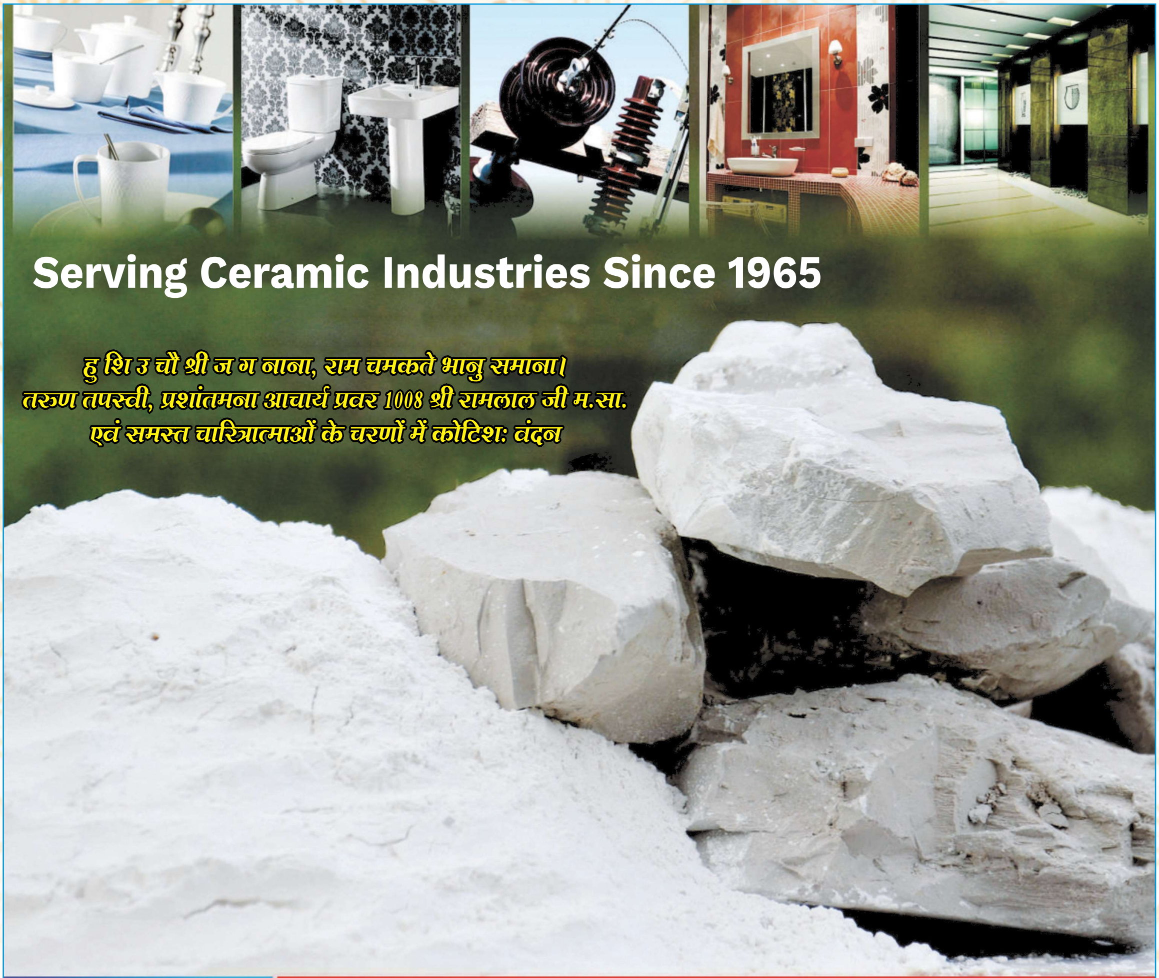

A Premier Clay Specialists in The Country...

- 48 years of experience with efficient processing technology and high-quality deposits of raw materials.
- Extraction, Processing and Refining of industrial minerals, particularly Ball Clay, China Clay, Bentonite, Silica Sand, Quartz, Potassium & Sodium Feldspar.
- In-depth knowledge of the market and understands the need for high-grade raw materials in the ceramic industries.
- Extraction of raw materials to the final delivery of the finished product, all of our procedures are subjected to ongoing quality monitoring.
- Export good quantity of minerals to various countries.
- Import of many others minerals and raw materials for Indian ceramics industries.

JLD MINERALS
Jaichand Lal Daga group

Corporate Office :
1st Floor, Labhuji Ka Katla,
Bikaner-334001, Rajasthan, INDIA

Phone : +91-151-2220380 / 2521624 / 3294234
FAX : +91-151-2522768, Mobile No. 09829217944
Email : wbcclay@yahoo.com

www.jldminerals.com

SIPANI

सिपानी सेवा सदन - 1

सिपानी समूह ने मानव सेवा के क्षेत्र में एक ऐसा हस्ताक्षर अंकित किया है, जो सदियों तक स्मरण किया जाता रहेगा। समूह ने अपने प्रथम चरण में सिपानी सेवा सदन-1 - बंदापुरा विलेज मडिवाला ग्राम, मर्सुर पोस्ट, अनेकल तालूक, बेंगलूरु - 562106 में 12 वर्ष पूर्व जिस योजना को क्रियान्वित किया उसके अंतर्गत सदन की बहुमंजिला इमारत में 400 मरीजों एवं उनकी देखरेख करने वाले नर्स, कर्मचारी आदि की व्यवस्था रखी गई है।

सिपानी सेवा सदन - 2

सेवा के कदम आगे बढ़ाते हुए सिपानी समूह ने सिपानी सेवा सदन - 2 का निर्माण कार्य प्रारम्भ करवा दिया है। इस भवन में उपरोक्त के अतिरिक्त 500 मरीजों एवं उनके लिए आवश्यक डॉक्टर, नर्स कर्मचारी एवं एम्बुलेंस आदि की सुविधा उपलब्ध रहेगी।

SIPANI

Sipani Seva Sadan-2
Address No. 149/1 & 150/1 Bandapura village, Madivala grama, Marsur post Anekal taluk, Bangalore 562106
Phone number +91 8431 888 000 & +91 9513 361 335

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना,
राम चमकते भानु समाना।
तरुण तपस्वी, प्रशांतमना आचार्य प्रवर
1008 श्री रामलाल जी म.सा.
एवं समस्त चारित्रात्माओं के चरणों में
कोटिश: वंदन!

SIPANI MARBLES

STRONG - STYLISH - SOPHISTICATED

Royal Italian Marbles

AS PER ISI STANDARDS

WWW.SIPANIMARBLES.COM

संघ से संबंधित विभिन्न जानकारियां

प्रकाशक

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

प्रधान कार्यालय

समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग,
नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर-334401
(राज.) फोन : 0151-2270261
helpdesk@sadhumargi.com

अध्यक्ष एवं प्रधान संपादक

नरेन्द्र गांधी, जावद

सह संपादिका

श्रीमती मोनिका जय ओस्तवाल, ब्यावर

श्रमणोपासक सदस्यता

केवल भारत में	1,000/-	(15 वर्ष के लिए)
विदेश हेतु	15,000/-	(10 वर्ष के लिए)

वाचनालय हेतु (केवल भारत में)

वार्षिक	50/-

संघ सदस्यता

साधारण सदस्यता	500/-
आजीवन सदस्यता	5,000/-

साहित्य सदस्यता

15 वर्ष	(केवल भारत में) 3,000/-

संघ केन्द्रीय कार्यालय के विभिन्न विभागों से कार्य सम्पादन हेतु सम्पर्क करें :-

E-mail : ho@sadhumargi.com

बैंक खाता विवरण

Shree Akhil Bharatvarshiya Sadhumargi Jain Sangh, Bikaner

State Bank of India

SCAN & PAY

Account No.	:	31264126681
IFSC Code	:	SBIN0003401
Branch	:	G.S. ROAD, Bikaner
Mob.	:	7073311108
E-mail	:	**accounts@sadhumargi.com**

व्हाट्सएप और ई-मेल आईडी

श्रमणोपासक	: 9799061990	}	news@sadhumargi.com
श्रमणोपासक समाचार	: 8955682153		
साहित्य	: 8209090748	:	sahitya@sadhumargi.com
महिला समिति	: 6375633109	:	ms@sadhumargi.com
समता युवा संघ	: 7073238777	:	yuva@sadhumargi.com
धार्मिक परीक्षा	: 7231933008	}	examboard@sadhumargi.com
कर्म सिद्धांत	: 7976519363		
परिवारांजलि	: 7231033008	:	anjali@sadhumargi.com
विहार	: 8505053113	:	vihar@sadhumargi.com
पाठशाला	: 9982990507	:	pathshala@sadhumargi.com
शिविर	: 7231833008	:	udaipur@sadhumargi.com
ग्लोबल कार्ड अपडेशन	: 6265311663	:	globalcard@sadhumargi.com
सामाजिक, संघ सदस्यता, सहयोग, समृद्धि, जन सेवा, जीव दया आदि अन्य प्रवृत्तियाँ		:	9602026899
शैक्षणिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, साहित्य संबंधी प्रवृत्तियाँ		:	7231933008
संघ हेल्पलाइन (WhatsApp only)		:	8535858853

-: सूचना :-

निवेदन है कि किसी भी कार्य के लिए संबंधित विभाग से ही संपर्क करें।
इससे आपका कार्य सुगम और त्वरित गति से हो सकेगा।
कार्यालय समय - प्रात: 10:00 से सायं 6:30 बजे तक
लंच - दोपहर 1:00 से 1.45 बजे तक

आवश्यक सूचना

सभी संघ सदस्यों से निवेदन है कि कृपया कोई भी नकद भुगतान (Cash Payment) श्री संघ के किसी भी सदस्य, कार्यालय अधिकारी को किसी भी प्रवृत्ति में करें तो केन्द्रीय कार्यालय के लेखा विभाग (Accounts Department) को सूचना जरूर देवें। इससे आपको पक्की रसीद शीघ्र ही भिजवाई जा सकेगी। मो.न. 7073311108 पर व्हाट्सएप करें।

जय गुरु नाना

जय महावीर

जय गुरु राम

YOUR TRUST

RAKSHA PIPES

OUR GUARANTEE

FLEXIBILITY IS OUR STRENGTH
RAKSHA SHAND GROUP
SINCE 1977

INDIA'S MOST TRUSTED BRAND

FIRST IN INDIA

ISI FITTINGS WITH ADVANCED
CO-MOULDED DURO RING SEAL

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना,
राम चमकते भानु समाना।
तरुण तपस्वी, प्रशांतमना आचार्य प्रवर
1008 श्री रामलाल जी म.सा.
एवं समस्त चारित्रात्माओं के चरणों में
कोटिश: वंदन!

Sri Shantilal, Sanjay, Ajay & Tushar Shand

SHAND GROUP OF INDUSTRIES

No. 52, 7th Cross, Wilson Garden, Bengaluru - 560027.INDIA
Phone: +91-80-22235726, 22271902, 22225734.
Fax: +91-80-22234779. E-mail: mkt@shandgroup.com

RAKSHA FLO
P.T.M.T TAPS & ACCESSORIES

Diamond Duroflex

Diamond DUROLON

DURO RING

Now with new M.R.O. Technology Resists high Impact

LEAK PROOF

NSF/ANSI/CAN 61 IAPMO

IS 15778 : 2007 CM/L NO : 2526149

ENVIRONMENT FRIENDLY LEAD FREE

cftri CERTIFIED

UV STABILIZED

LUCALOR FRANCE

www.shandgroup.com

रक्षा – जीवन भर की सुरक्षा

www.rakshapipes.com

@absjainsangh

www.facebook.com/HOSadhumargi

रचनाकारों अथवा लेखकके विचारों से संपादक की सहमति होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र बीकानेर ही रहेगा।

प्रधान सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक नरेन्द्र गांधी के लिए जैन आर्ट प्रेस, बीकानेर के लिए साक्षी प्रिंटर्स, जयपुर (राज.) में मुद्रित प्रतियाँ 24,700

प्रेषक : श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग, नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर-334401 (राज.), फोन नं. 0151-2270261